पूर्वी उत्तर प्रदेश

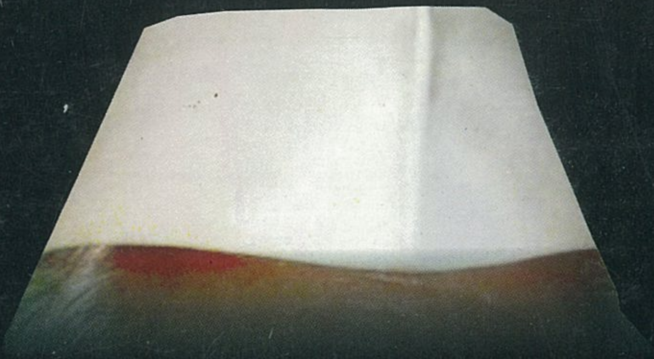

मौत, माफ़िया और सियासत

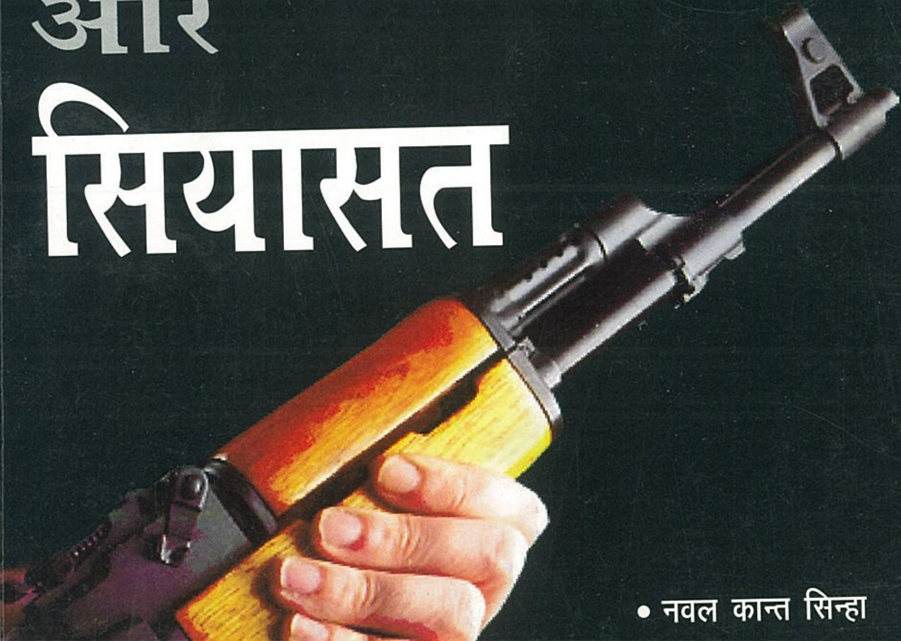

• नवल कान्त सिन्हा

पूर्वी उत्तर प्रदेश

मौत, माफिया और सियासत

◆ नवल कान्त सिन्हा

❑ नवल कान्त सिन्हा

प्रकाशक
" अनन्त "
18/495, इन्दिरानगर,
लखनऊ–226016
anantindia@dellmail.com

मुद्रक
" मल्टीमीडियम "
संजय गांधी पुरम, फैज़ाबाद रोड,
लखनऊ–226016

मूल्य – रूपये 95.00

प्रथम संस्करण 2006

लेज़र कम्पोज़िंग एवं कम्प्यूटर डिज़ाइन
इम्ज़ेक ओवरसीज़ टेक्नोलॉजी

कवर
मुहम्मद ज़ीशान

भूमिका

पूर्वांचल की राजनीति में अपराध का जहर

उत्तर प्रदेश की राजनीति खासतौर से पूर्वांचल की राजनीति में जिस तरह से अपराधियों की घुसपैठ बढ़ रही है, ये चिंताजनक है। अगर हम पिछले चार दशकों को देखें तो पता चलता है कि राजनीति में अपराधिक प्रवृत्ति के लोगों की संख्या लगातार बढ़ रही है। अपराधियों के राजनीति में तेजी से घुसपैठ करने से लोकतांत्रिक तरीके से राजनीति करनेवाले हताश और निराश हो मैदान छोड़ने लगे हैं। राजनीतिक संरक्षण मिलने से अपराधी सम्मानित हो रहे हैं। पुलिस के सामने उन्हें सलाम करने के सिवा कोई दूसरा रास्ता नही बचा है। सबूत का अभाव और न्याय में होने वाले अतिशय विलम्ब से अपराधियों के हौंसले बढ़े हैं। वो चुनाव लड़ रहे हैं और जीत भी रहे हैं। ताकत और अथाह संसाधन होने के चलते ये अपने वोट बैंक को मदद भी पहुंचा रहे हैं। जाहिर है इससे क्षेत्र में इनकी लोकप्रियता बढ़ गयी है और ये लोग अपने इलाके के 'रॉबिन हुड' बन गये हैं। यही वजह है कि ये हत्या करते हैं, तस्करी भी करते हैं, रंगदारी वसूलते हैं लेकिन फिर भी चुनाव में इन्हें जीत हासिल होती है। राजनीतिक दल इनकी जीतने–जिताने की शक्ति को जानते हैं इसीलिए इन्हें गले लगाये बैठे हैं। फिलहाल इन बाहुबलियों का रुतबा कम होने का आसार नजर नही आता।

आखिर वो कौन सी वजह है कि राजनीति में अपराधीकरण बढ़ता जा रहा है। वो कौन सी वजह है कि पूर्वांचल में अपराधियों को सामाजिक और राजनीतिक स्वीकृति मिल रही है। क्या कारण है कि जातिवाद और साम्प्रदायिकता पूर्वी उत्तर प्रदेश के लिए नासूर बनती जा रही है। इस पुस्तक में इन्हीं सवालों के जवाब तलाशने की कोशिश की गयी है। अपने स्वार्थ के चलते माफिया सरगनाओं और नेताओं ने राजनीति, अपराध, धन और धर्म को मिला कर समाज में जो जहर घोला है, उसकी वजहों को ढूंढ़ने की कोशिश की गयी है। पूर्वांचल के सामाजिक ताने–बाने में अपराध किस तरह से जगह बना रहा है और लोग उसे क्यों स्वीकार करने लगे हैं, इसका विश्लेषण किया गया है।

इतने सारे तथ्य हैं कि उन्हें एक किताब में समेटना आसान नही है। फिर भी कोशिश की गयी है कि पूर्वांचल में राजनीति के अपराधीकरण के नजारे को दिखाया जा सके। विषय पर शोध किया गया है और ज्यादा से ज्यादा आंकड़े देने का प्रयास हुआ है। किसी आदमी के माफिया सरगना बनने के पीछे कौन–कौन सी वजहें होती है और वो राजनीति में क्यों और किस तरह से जगह बना लेते हैं, इसको भी बताने की कोशिश हुई है। यह किताब राजनीति और अपराध में रुचि रखनेवालों के लिए उपयोगी साबित हो सकती है।

नवल कान्त सिन्हा
navalsinha@yahoo.co.in

पूर्वी उत्तर प्रदेश वह धरती है, जो अपनी पुरातन परम्परा, पवित्रता और प्रेम के लिए हजारों साल से पहचानी जाती रही है। वही धरती, जहां पवित्र नदियों के किनारे दुनिया की सबसे पुरानी सभ्यता ने अपना ठौर बनाया। जहां की हाथ की कारीगरी की मिसाल पूरी दुनिया में दी जाती रही है। जहां के लोगों के अपनापन और लगाव की कथा–कहानियां लिखी–पढ़ी जाती रही हैं। यह वह क्षेत्र है, जहां कई तीर्थ मौजूद हैं। वही जगह है, जहां पूरी दुनिया से लोग घूमने और धार्मिक आस्था की ऊंचाइयां महसूस करने आते हैं। यहां ही तुलसीदास ने रामचरितमानस की रचना की। यहां ही संत कबीर पैदा हुए और 'ढाई आखर प्रेम का, पढ़े सो पंडित होय' का सबक सिखाया। यही क्षेत्र महात्मा बुद्ध और बौद्ध धर्म के लिए जाना जाता है, उनके अहिंसा के पाठ के लिए जाना जाता है।

लेकिन लगता है कि अब इस धरती को किसी की नज़र लग गयी है। लगता है यहां तुलसीदास के रामराज्य, कबीर के प्रेम–सद्भावना और महात्मा बुद्ध की अहिंसा को भुला दिया गया है। यहां कभी साम्प्रदायिक दंगे में भाइचारे और मुहब्बत से भरी ज़िंदगी जलती नज़र आती है, तो कभी भूख और कुपोषण से मौत पर गरीबी रोती नज़र आती है। कंगाली से तंग बेरोज़गार बुनकरों की खुदकुशी किसी से छुपी नहीं है। तो ऐसे मजबूर भी हैं जो बच्चे की भूख मिटाने के लिए खून तक बेच रहे हैं। यह सच है कि अब लालबहादुर शास्त्री और जयप्रकाश नारायण की धरती का अंदाज़ कुछ बदला–बदला सा है। शिक्षक, वकील और डॉक्टर के सम्मानित पेशों से राजनीति में आने का दौर पुराना हो गया है। अब राजनीति उनको भी भा रही है, जिनका असली पेशा अपराध है। जो अपहरण, हत्या, लूट और डकैती करते हैं। उन्हें अपने अपराध को ढकने के लिए खादी की दरकार है और ये असम्भव भी नही है। कई माफिया सरगनाओं ने अपने राजनीतिक मुकाम हासिल किये हैं। जो पुलिस उन्हें गोली ठोकने के लिए तलाशती थी, वो उन्हें सलाम ठोकने पर मजबूर है। वजह चाहे जो भी हो, आपराधिक प्रवृति के लोग पूर्वांचल में चुनाव लड़ रहे हैं, वोट पा रहे हैं और जीत भी रहे हैं। धन, धमक और धौंस का रौबदाब इस इलाके की पहचान बना हुआ है।

पूरी दुनिया के साथ कदमताल करते हुए देश चाहे जितना आगे जा रहा हो लेकिन पूर्वांचल की धरती लोगों की सोच आज भी पुरानी बनी हुई है। हां, इतना जरूर हुआ है कि आधुनिकता की दौड़ में यहां के पुराने धंधे चौपट हुए हैं। हाथ की कारीगरी की जगह मशीनों की डिज़ाइन ने ले ली है। बेरोजगारी बढ़ी है, खाने के लाले पड़ गये हैं। जो पैसेवाले हैं वो गरीबों को अपने जूते की नोंक पर रखना चाहते हैं, चाकरी कराना चाहते हैं। लेकिन खुद पैसेवाले भी चैन से नही हैं, पेशेवर अपराधी पैसेवालों से रंगदारी वसूल रहे हैं। जाति और मज़हब का बोलबाला है। इसका फायदा राजनीतिज्ञ और अपराधी दोनों उठा रहे हैं। नेताओं को जातियों के ध्रुवीकरण से वोट मिलते हैं तो अपराधियों को जाति और मजहब के नाम पर अपने गिरोह को संगठित करने में मदद मिल रही है।

गंगा तट पर मानो वक्त मध्य युग में ही ठहर सा गया है। यहां की सामंती व्यवस्था अपने रौब–दाब के प्रदर्शन का कोई मौका नहीं छोड़ती क्योंकि सदियों से ऐसी ही चली आ रही है। यहां न लोग बदले हैं, न व्यवस्था। यह व्यवस्था अपनी शान के आगे किसी कानून को नहीं मानती। अपने ढर्रे पर जीने का यहां के लोगों का अंदाज है। ऐसा नहीं कि यहां बदलाव नहीं हुए। यहां कई बदलाव हुए, लेकिन लोगों का सामंती अंदाज नहीं बदला। आजादी के पहले किसी गांव में ठाकुरों, भूमिहारों और ब्राह्मणों के जमींदार और सामंती परिवारों के रुतबे की पहचान उनके दरवाजे पर बंधें घोड़ें और हाथियों से होती थी। किसी की जान लेना या बख्शना, उनकी शान का हिस्सा था। शादी–ब्याह में दौलत लुटायी जाती थी। असलहों का प्रदर्शन जरूरी था। नर्तकियों का नाच जरूरी था।

पूर्वी उत्तर प्रदेश में जाति और मज़हब का बोलबाला है। इसका फायदा राजनीतिज्ञ और अपराधी दोनों उठा रहे हैं। नेताओं को जातियों के ध्रुवीकरण से वोट मिलते हैं तो अपराधियों को जाति और मजहब के नाम पर अपने गिरोह को संगठित करने में मदद मिल रही है।

समय के साथ काफी कुछ बदला पर लोगों की मानसिकता नहीं बदली। हाथी–घोड़े हटे तो उनकी जगह क्वालिस–सफारी–टवेरा ने ले ली। तलवारें हटीं तो बंदूकें टंग गयीं। हथियारबंद समर्थक और निजी सेनाएं नजर आने लगीं। फिर शादी और हो या जन्मदिन, पर बन्दूकों का गोली उगलने के शौक पर आश्चर्य करने की कोई वजह नही है। नर्तकियों पर नोट उड़ाना बदस्तूर जारी है। वो बात अलग है कि दारू और तेवर के

नशे में चूर इन असलहाधारियों की गलती से लोगों की जान भी जाती हैं। एक छोटा सा उदाहरण लीजिये, जनवरी 2003 से जुलाई 2004 के बीच राज्य में जश्न के दौरान 218 लोगों की जान गयी। कहने की जरूरत नहीं कि ज्यादातर मौतें पूर्वांचल में हुई लेकिन यहां के लोगों पर उसका कोई असर नही है। बंदूकों के लाइसेंस की चाहत रखनेवालों की लाइन लगातार लम्बी हो रही है।

उत्तर प्रदेश में जनवरी 2003 से जुलाई 2004 के बीच जश्न के दौरान चली गोलियों से 218 लोगों की मौत हुई, इसके बावजूद बंदूक के लाइसेंस लेने का क्रेज़ कम नहीं हुआ है।

ऐसे माहौल में अपराधी और माफिया उभरने लगे तो कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए। वैसे माफिया सरगनाओं के उभरने की कई वजह हैं। यहां उद्योग–धन्धे बन्द हैं। निरक्षरता, पिछड़ापन और विकास की कमी है। बिहार की सीमा से सटा होने की वजह से यह पूरा इलाका अपराधियों की शरणगाह बना हुआ है। छोटी सी जरूरत और छोटी सी बात पर भी यहां हत्याएं हो जाती हैं। आम आदमी भी यहां हथियार उठाने से नही डरता। शायद हथियार उठाना उसकी मजबूरी है। लेकिन यह भी हकीकत है कि यहां के लोग पश्चिमी चकाचौंध भरी ज़िंदगी जीने के लिए अपराध में नही कूदते। यहां 1985 के बाद से जैसे औद्योगिक इकाइयां लगनी बन्द सी हो गयी हैं। जाहिर है बेरोजगारी की आगोश में ये इलाका लगातार जा रहा है। इस इलाके में कॉलेज से निकलने वाले छात्रों के सामने मानो गिरोह में शामिल होने के सिवा कोई विकल्प नहीं बचा है। ये कहने में झिझक नहीं होनी चाहिए कि जिस राज्य ने देश को सबसे अधिक प्रधानमंत्री दिये। जहां गंगा–जमुनी तहज़ीब की मिसाल दी जाती थी। जहां का अपना विशिष्ठ साहित्यिक–सांस्कृतिक महत्व था, वह राज्य अब बाहुबलियों का गढ़ बन गया है। विधायक कृष्णानन्द राय और राजू पाल की हत्या के बाद से गैंगवार, राजनीति का अपराधीकरण और राजनीति में हत्या की चर्चा अब जोरदार ढंग से की जाने लगी है। विधायक कृष्णानन्द राय की सनसनीखेज हत्या पूर्वांचल में माफिया सरगनाओं की गैंगवार और राजनीति के अपराधीकरण की एक बड़ी मिसाल है।

उस दिन मंगलवार था और तारीख थी 29 नवम्बर 2005 ...थाना भांवरकोल के सियाड़ी गांव में बच्चों का एक क्रिकेट मैच था। इस मैच का उद्घाटन भारतीय जनता पार्टी के विधायक कृष्णानन्द राय को करना था। कृष्णानन्द राय करीब डेढ़ बजे अपने पैतृक गांव गोड़उर से मैच का उद्घाटन करने निकले, लेकिन उनके साथ चल रहे शायद किसी भी आदमी को यह नही मालूम था कि आगे मौत उनका इंतज़ार कर रही है। जब

कृष्णानन्द राय का काफिला दोपहर करीब ढाई बजे जगदीशपुर और बमनिया के बीच एक संकरी से पुलिया से गुजर रहा था, तभी चारों तरफ से घेर के ए.के. रायफलों से उन पर बर्स्ट फायरिंग की गयी। इस हमले में विधायक कृष्णानन्द राय छलनी हो गये। उनके सात साथी भी मारे गये। यह राजनीतिक हत्या तो थी ही लेकिन इस हत्याकाण्ड के पीछे गैंगवार का एक लम्बा–चौड़ा इतिहास भी है। वर्चस्व की लड़ाई में हुई इस हत्या के कई आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक मतलब हैं।

इस हत्या की वजह को समझने के लिए मुख्तार अंसारी और माफिया बृजेश सिंह की दुश्मनी को जानना जरूरी है। मुख्तार और माफिया बृजेश सिंह की अदावत एक लम्बे अरसे से जगजाहिर है। कृष्णानन्द राय बृजेश सिंह का राजनीतिक चेहरा माने जाते थे। कृष्णानन्द राय ने मुख्तार के भाई अफजाल अंसारी के खिलाफ चुनाव लड़ कर जो अदावत का आगाज किया था, उसका अंजाम कृष्णानन्द राय की हत्या पर हुआ। बृजेश सिंह का ही करीबी होने की वजह से वह मुख्तार अंसारी के निशाने पर थे। मुख्तार के समर्थक गिरोह भी राय को अपना शिकार बनाने के लिए लगे रहते थे। इसके अलावा भारतीय जनता पार्टी के नेता मनोज सिन्हा की वजह से भी कृष्णानन्द की मुख्तार से दुश्मनी और गहरायी। दरअसल भाजपा के मनोज सिन्हा मुख्तार के गृह जिले गाजीपुर से चुनाव लड़ा करते थे। उन्हें गाजीपुर में भाजपा को मजबूत करने के लिए एक ताकतवर आदमी चाहिए था, लिहाजा वह कृष्णानन्द राय को गाजीपुर ले आये। यहीं से शुरू हुआ दुश्मनी का दौर।

मुख्तार अंसारी और माफिया सरगना बृजेश सिंह की लम्बे समय से दुश्मनी चल रही है और कृष्णानन्द राय बृजेश सिंह का राजनीतिक चेहरा माने जाते थे।

कृष्णानन्द राय गाजीपुर के मुहम्मदाबाद विधानसभा क्षेत्र में भारतीय जनता पार्टी के टिकट पर चुनाव लड़ने के साथ ही मुख्तार अंसारी की नजरों में चढ़े। यहां से मुख्तार अंसारी के भाई विधायक बनते थे। 1996 के चुनाव में पहली बार लड़े कृष्णानन्द राय अफजाल अंसारी से चुनाव हार गये लेकिन इसी दौरान उन्होंने मुख्तार के विरोधियों और भूमिहारों का समर्थन जुटा लिया। फिर हुआ 2002 का चुनाव। इसमें कृष्णानन्द राय ने अफजाल अंसारी को हरा दिया। अंसारी भाइयों के लिए यह बहुत बड़ा धक्का था क्योंकि अफजाल अंसारी पिछले कई विधानसभा चुनावों में इस सीट से जीत रहे थे। एकतरफ अंसारी परिवार से राजनीतिक मुकाबला और दूसरी तरफ बृजेश सिंह से नाता कृष्णानन्द राय की मुख्तार अंसारी से दुश्मनी की बड़ी वजहें थी। दोनों बाहुबली गैंगों का टकराव भी किसी से छुपा नही था। 15 जुलाई 2001 को मुहम्मदाबाद क्षेत्र में उसरी चट्टी पर हुई घटना के बाद से मुख्तार अंसारी एवं कृष्णानन्द राय के बीच दुश्मनी गहरायी। उसरी चट्टी की घटना में तीन व्यक्तियों की मौत हुई थी, जिसमें मुख्तार अंसारी बाल–बाल बच गये थे। इस हमले में उनका गनर और खास बाबू मारा गया था। इसमें हमले में एक युवक मनोज राय की भी मौके पर ही मौत हुई। वह बिहार का निवासी था और उसे कृष्णानन्द राय के यहां देखा जाता था। उसरी चट्टी की घटना को राजनीतिक तूल दिया गया। घटना की तह तक जाने के लिए इसकी सीबीआई जांच की भी प्रशासनिक पहल की गयी लेकिन बाद में उसे बीच में ही रोक दिया गया। इस हमले में बृजेश सिंह, अनिल सिंह, त्रिभुवन सिंह नामजद हुए और 15–16 को अज्ञात दिखाया गया। पुलिस ने घटना की तफ्तीश की, लेकिन एक भी नामजद अभियुक्त गिरफ्तार नहीं किये गये। बाद में इनमें से अनिल सिंह की हत्या कर दी गयी।

कृष्णानन्द राय के विधानसभा क्षेत्र मुहम्मदाबाद पर गौर करने की जरूरत है। यह भूमिहार बाहुल्य इलाका है। यहां कृष्णानन्द राय ने अपना वर्चस्व कायम कर लिया था। यह मुख्तार अंसारी को खल रहा था। कृष्णानन्द राय अंसारी भाइयों को एक बड़ी अड़चन नजर आ रहे थे। यही वजह है कि कृष्णानन्द राय और मुख्तार अंसारी एक दूसरे के जानी–दुश्मन बन गये। दोनों लखनऊ के कैन्ट इलाके में भी भिड़े और गोलियां चलीं। 2002 में अफजाल के हारने के साथ अदावत और गहरी होती गयी। इसके बाद 2004 के लोकसभा के चुनाव में अफजाल अंसारी खड़े हुए तो उनके मुकाबले में मनोज सिन्हा उतरे। कहा जा रहा था कि ये चुनाव प्रत्याशियों के बीच न होकर मुख्तार अंसारी और कृष्णानन्द राय की ताकतों के बीच है। साबित भी हुआ, इस चुनाव में जमकर हिंसा हुई। झड़प हुई, गोलियां चलीं, हत्या हुई, गरीबों की झुग्गियां जलायी गयीं। वाहनों को भी आग के हवाले किया गया। तेवर और ताकत के इस चुनाव में मुख्तार अंसारी भारी पड़े। मनोज सिन्हा को हार का सामना करना पड़ा और अफज़ाल अंसारी ने फतेह दर्ज की। चुनाव में कृष्णानन्द राय के दो समर्थकों को जान से हाथ धोना पड़ा।

इस हिंसा की पहले से आशंका थी क्योंकि मुख्तार–बृजेश की दुश्मनी को सभी

गाजीपुर का मुहम्मदाबाद विधानसभा क्षेत्र भूमिहार बाहुल्य इलाका है, जहां कृष्णानन्द राय ने अपना वर्चस्व कायम कर लिया था। यह विरोधियों को हजम नहीं हो रहा था।

वाराणसी के यू.पी. कॉलेज में पढ़ाई के दौरान माफिया सरगना बृजेश सिंह की गिनती विज्ञान के तेज विद्यार्थियों में होती थी लेकिन पिता की हत्या ने उसे शातिर माफिया सरगना बना दिया।

जानते थे और कृष्णानन्द राय बृजेश सिंह गिरोह का प्रतिनिधित्व करते थे। ये एक बड़ी हकीकत है कि इन दोनों गुटों की रंजिश में जितनी हत्याएं हुई हैं, वह शायद अब तक के इतिहास में किसी भी दूसरे गुटों के बीच नहीं हुई हैं। दोनों गिरोहों के दहशत की गूंज गाजीपुर और वाराणसी के बाहर भी सुनी जाने लगी। मुख्तार अंसारी एंड कंपनी बृजेश सिंह के किसी भी आदमी को ताकतवर होते हुए बिलकुल नही देखना चाहती थी। ऐसे में कृष्णानन्द राय का परवान चढ़ना मुख्तार अंसारी को कैसे भाता? वैसे भी जिस व्यक्ति की छात्र जीवन से ही हनक कायम हो, उसे मौका देकर विपक्षी गैंग चूक ही करता। अगर कृष्णानन्द राय के छात्र जीवन पर गौर करें तो अस्सी के दशक में बीएचयू में छात्र राजनीति करनेवाले ही नहीं, गंभीरता से पढ़ाई करने वालों में भी कृष्णानन्द राय का नाम अपरिचित नहीं था। अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद का बीएचयू में संगठन खड़ा करने में अहम भूमिका निभाने वाले इस शख़्स को भाजपा में शामिल कराने का श्रेय मनोज सिन्हा को मिला।

अस्सी के दशक में बीएचयू की छात्र राजनीति में एनएसयूआई के अनिल श्रीवास्तव, संयुक्त मोर्चा के राजेश मिश्र व अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद के बैनर तले चुनाव लड़ रहे मनोज सिन्हा के लिए भूमिहार छात्रों की अगुवाई करनेवाले कृष्णानंद राय को साथ मिलाकर चलने के होड़ लगी थी। एनएसयूआई के अनिल श्रीवास्तव के साथ कुछ दिन तक जुड़े कृष्णानन्द अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद के सदस्य बने। भारतीय संस्कार को जीवन में उतारने वाले कृष्णानंद में संगठन चलाने की दक्षता देखकर परिसर में छात्रों को जोड़ने का काम मिला। पढ़ाई के दौरान बी.एच.यू. के करीब ही लंका की मशहूर पान की दुकान के पास रहने वाले कृष्णानंद राय को संस्कार पारिवारिक विरासत में मिला। पिता ने चुंडी रखने की सीख दी, जो आज भी उनके परिवार में कायम हैं। सवेरे उठकर पूजा–पाठ करने के साथ लोगों से सामान्य तरीके से मिलना–जुलना उनकी आदत में शुमार था। लंका क्षेत्र छोड़कर जब वह कमच्छा स्थित मकान में रहने लगे तो उसी दौरान काशीराज अपार्टमेंट का निर्माण शुरू हुआ। इसके निर्माण को लेकर शुरुआती विरोध के कारण सुर्खियों में आये कृष्णानन्द बाद में उसके पार्टनर बन गये और बिल्डिंग कारोबार से जुड़े। उनके दोस्तों की बात पर विश्वास करें तो अच्छे संगठनकर्ता का जो गुर उन्होंने

विद्यार्थी परिषद से सीखा था, वह इस धंधे में उनके फलने–फूलने में काम आया। उधर, बीएचयू की छात्र राजनीति से निकलकर भाजपा के टिकट पर गाजीपुर के सांसद बने मनोज सिन्हा को राजनीतिक चुनौती देने का काम अंसारी बंधु कर रहे थे, अपने को उनसे निपटने में कमजोर पा रहे सिन्हा को बीएचयू में संकटमोचक रहे कृष्णानंद राय ही याद आये। मनोज सिन्हा ने उन्हें भाजपा में शामिल करवाने के साथ 1996 में मुहम्मदाबाद विधानसभा से टिकट दिलवाया। मुहम्मदाबाद की जनता ने कृष्णानंद को 2002 में विधानसभा भेजकर उनके संघर्ष की कीमत चुकायी।

जिस दिन बृजेश सिंह के पिता की हत्या हुई, उस दिन तीज का त्योहार था। अपने पिता की हत्या पर बृजेश रोया नही और घर के सामने मंदिर पर उसने खून का टीका लगाकर पिता के हत्यारों से बदला लेने की कसम खायी।

उन पर उनके विरोधी हमेशा ये आरोप लगाते रहे कि वह आपराधिक गतिविधियों में लिप्त रहते थे। आम लोगों को डराते–धमकाते–सताते थे। पर कभी किसी व्यापारी ने कृष्णानन्द राय के खिलाफ रंगदारी वसूली की शिकायत नही की। लेकिन ऐसा भी नही है कि उनका दामन एकदम पाक–साफ रहा हो। कृष्णानन्द राय के खिलाफ भी आपराधिक मामले थे। गोलू अपहरण काण्ड में पुलिस ने उनके घर की तलाशी ली थी। भूमिहार होने के कारण उन पर उत्तर प्रदेश में बिहार की रणवीर सेना का मुखिया होने का आरोप लगता रहा। हालांकि पुलिस ने कभी इसकी पुष्टि नही की। बहरहाल आपराधिक मामलों के बावजूद कृष्णानन्द राय न तो कुख्यात अपराधी थे और न माफिया सरगना। पर वह मुख्तार विरोधी खेमे का स्तम्भ बन गये थे। जो लोग मुख्तार के साथ प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से लड़ रहे थे, वो राय के साथ आ गये। यही बात थी कि विरोधी गुट किसी भी हालत में कृष्णानन्द राय को ठिकाने लगाना चाहता था।

हत्या से पहले भी उसी साल करीब पांच महीने पहले कृष्णानन्द राय पर जानलेवा हमला करने की साजिश की गयी थी। यह बात है जुलाई 2005 की, जब लखनऊ–वाराणसी राष्ट्रीय राजमार्ग दो वाहनों में सवार कुख्यात बदमाशों का दस्ता ज्यों ही बदलापुर के एक ढाबे से आगे बढ़ा, तभी जौनपुर पुलिस को इसकी भनक लग गयी। पुलिस ने जबरदस्त घेराबंदी की। जवाब में बदमाश एक दरोगा पर गोली चलाकर भागने लगे, लेकिन इनकी कोशिश विफल हुई। पुलिस ने इन्हें जफराबाद थाना क्षेत्र के मखदूम शाहबड़े (ताड़तला)

के गांव में घेर लिया। इस दौरान दो बदमाश भाग निकलने में कामयाब रहे और दो बदमाश पुलिस से घिर गये। कोई रास्ता न देख इन दोनों बदमाशों ने एक बालिका को बंधक बनाकर उसके घर में शरण ले ली। दोनों ओर से फायरिंग हुई और इस फायरिंग में दोनों बदमाश मारे गये। इनमें एक ही पहचान लखनऊ के कुख्यात अपराधी विजय बहादुर सिंह के रूप में हुई लेकिन दूसरे की शिनाख्त नहीं हो सकी। मुठभेड़स्थल के पास से पकड़े गये एक संदिग्ध युवक से पुलिस ने कई दिन पूछताछ की। अखबारों ने पुलिस सूत्रों के हवाले से लिखा कि ये बदमाश गाज़ीपुर के विधायक कृष्णानंद राय और वाराणसी के सांसद राजेश मिश्रा की हत्या करने जा रहे थे। बहरहाल राय विरोधियों ने नवम्बर 2005 में कोई गलती नही की और कृष्णानन्द मारे गये। अखबारों में ये भी छपा कि भाजपा विधायक कृष्णानंद राय की हत्या का मामला अंतरराष्ट्रीय अपराध जगत के सरगना छोटा राजन के दरबार में भी पहुंचा। बृजेश गिरोह के इनामी त्रिभुवन सिंह तथा सुभाष ठाकुर से जुड़े वाराणसी के दो लोगों ने छोटा राजन से जवाबी कार्रवाई में मदद मांगी। दरअसल इस हत्या ने राजनीति ही नहीं, जरायम की दुनिया को भी हिलाकर रख दिया। जानकारों का दावा है कि विधायक की हत्या को पूर्वांचल में धमक बरकरार रखने के लिए 'डी' ग्रुप के इशारे पर अंजाम दिया गया। दाऊद गिरोह के लिए रोड़ा बने भाजपा विधायक को समाप्त करने के लिए पूर्वांचल के बाहुबली माफिया ने करोड़ों रुपये खर्च किये। यह भी स्पष्ट हुआ कि विरोधी गुट बृजेश सिंह समर्थक किसी भी व्यक्ति को ज़िंदा नही देखना चाहता। यह समझने की जरूरत है कि आखिर लम्बे समय से लापता चल रहे बृजेश सिंह के नाम का इतना खौफ क्यों है और बृजेश सिंह अपराध की दुनिया में क्यों कूदा।

नज़र डालें तो बृजेश सिंह की ज़िंदगी एक फिल्म स्क्रिप्ट की तरह दिखेगी। वाराणसी के यू.पी. कालेज के छात्र बृजेश सिंह की गिनती विज्ञान के तेज विद्यार्थियों में होती थी। लेकिन अपने पिता रवीन्द्र सिंह की हत्या के बाद वह जरायम की दुनिया में कूद गया। बस अंतर इतना है कि फिल्मों में पिता की हत्या का बदला कहानी के अंत में होता है और बृजेश सिंह ने अपने पिता के हत्यारों और उसके साथियों को मौत के घाट उतार कर जरायम की पहली सीढ़ी पर कदम रखा। जिस दिमाग का इस्तेमाल उसे पढ़ाई में करना था, वह आपराधिक वारदातों में लगने लगा। बृजेश सिंह अंडरवर्ल्ड का इतना शातिर खिलाड़ी निकला कि उसके बारे में उसके गिरोह को भी पूरी जानकारी नहीं है। पुलिस और सी.बी.आई. का दबाव कहिये या फिर उसकी होशियारी बृजेश सिंह लम्बे समय

बृजेश सिंह ने पहला खून अपने पिता की हत्या के आरोपी पांचू सिंह के ताऊ बनारसी सिंह का गोली मारकर किया।

साधुशरण सिंह की हत्या के आरोपी साहब सिंह की हत्या वाराणसी न्यायालय के परिसर के गेट पर हुई, जिसका आरोप मुख्तार अंसारी पर लगा। साधुशरण सिंह मुख्तार अंसारी का गुरु माना जाता था।

से लापता है। चौबेपुर थाना क्षेत्र के धरहरा निवासी बृजेश सिंह ने वर्ष 1985 में जरायम की दुनिया में कदम रखने के साथ होशियारी से अपनी सारी तस्वीरें रिकार्ड से गायब करवा दीं।

शातिर माफिया सरगना बृजेश सिंह का नाम अखबार की खबरों में 1984 से आना शुरू हुआ। ...वह दिसम्बर, 1984 के ठंड की कुनकुनी सी दोपहर थी। सैदपुर की सीमा से सटे धरहरा गांव में अपने आलू के खेत में बनारसी सिंह सिंचाई कर रहे थे कि अचानक उनकी गोली मारकर हत्या कर दी गयी। उस दिन चौबेपुर थाने में पहली मर्तबा बृजेश सिंह का नाम पुलिस रिपोर्ट में दर्ज हुआ। यह वही बृजेश सिंह था, जिसकी पहचान गांव के सबसे होनहार और मेघावी छात्र के रूप में थी। वाराणसी के उदय प्रताप कॉलेज के इस छात्र ने इण्टर की परीक्षा में अपने वर्ग में सर्वाधिक अंक प्राप्त कर विद्यालय का नाम रौशन किया था। इस छात्र पर न सिर्फ विद्यालय बल्कि पूरे गांव को नाज़ था।

आखिर ऐसा कौन सा हादसा था जिसने एक प्रतिभाशाली छात्र की जिन्दगी का रुख पलट दिया और कलम वाले कोमल हाथों में पिस्तौल की सख़्त मुठिया आ गयी? क्लासरुम से पीछे मुड़े कदम अपराध के रास्ते पर कैसे बढ़ते चले गये? यह जानने के लिए उस कहानी तक पहुंचना बेहद जरूरी है, जहां सिर्फ अपनी दबंगई कायम रखने के लिए गांव के ही कुछ लोगों ने बृजेश सिंह के पिता को चाकुओं से गोद कर मार डाला। उस पिता को, जिसकी आंखों ने अपने लाडले बेटे को आई.पी.एस. अफसर बनाने के ख़्वाब पाल रखे थे। जो साइकिल से हर रोज दूध का बाल्टी लेकर कई कोस की दूरी तय कर यू.पी. कॉलेज सिर्फ इसलिए पहुंचता था कि बाहर रहकर पढ़ाई कर रहे उसके इस लाडले की सेहत सलामत रहे। ऐसे दुलार करनेवाले पिता की मौत पर बृजेश सिंह रोया नहीं। उसकी आंखों में पानी नही था, उसकी आंखों में इंतकाम की चिंगारी जल रही थी। कहते हैं कि अपने पिता की हत्या की ख़बर पाकर वहां पहुंचे बृजेश ने घर के सामने के मंदिर पर खून का टीका लगाकर यह कसम खायी की जिन लोगों ने सौभाग्य पर्व तीज के दिन उसकी मां का सुहाग उजाड़ा है, वह अब उन्हें नहीं छोड़ेगा। यह कहानी धरहरा गांव की टुकड़ों–टुकड़ों में बंटी कई छोटी–बड़ी उन कहानियों से जुड़ती है, जो गांव की राजनीति,

वर्चस्व की लड़ाई तथा गोलबन्दी के गलियारों से गुजर कर बृजेश के पिता रविन्द्रनाथ सिंह उर्फ भुल्लन सिंह की हत्या तक पहुंची थी।

गाजीपुर की सीमा पर स्थित धरहरा ठाकुर और यादव बहुल वाला गांव है। 70 के दशक के शुरुआत में ही इस गांव के यादवों और ठाकुरों के बीच वर्चस्व की लड़ाई शुरू हो गयी थी। इस गांव के रविन्द्रनाथ सिंह उर्फ भुल्लन सिंह, उनके मित्र अखिलेश्वर सिंह उर्फ बच्चा सिंह और दयाशंकर उन दिनों धरहरा गांव के ठाकुरों को नेतृत्व करते थे जबकि रघुनाथ यादव को गांव के यादवों का अगुवा माना जाता था। रघुनाथ की ओमप्रकाश सिंह उर्फ लुल्लुर सिंह से भी काफी पटती थी। लुल्लुर सिंह उन दिनों किसी बात को लेकर भुल्लन सिंह और उनके मित्रों से नाराज चल रहा था। वर्ष 1978 में गांव में मन्दिर के सामने बन रही सड़क के विवाद को लेकर ठाकुर और यादव एक दूसरे के विरुद्ध खुलकर आ गये। इस विवाद के कुछ दिनों बाद ठाकुर गुट के अखिलेश्वर सिंह उर्फ बच्चा सिंह जब अपने पंपिंग सेट पर थे, तभी वहां पहुंचे यादवों से उनका झगड़ा होने लगा। कहते हैं कि अखिलेश्वर सिंह ने उस समय हवा में गोली चलायी और वहां से भाग निकले। उधर इस बात की ख़बर जब अखिलेश्वर सिंह के पिता इन्द्रदेव सिंह को हुई तो अपने पुत्र का पता लगाने के लिए घर से बाहर निकले। रास्ते में जुटे यादवों ने इंद्रदेव को लाठी–बल्लम से मार डाला। इस हत्या के मामले में रघुनाथ यादव, चुनमुन यादव और लुल्लुर सिंह के विरुद्ध मुकदमा दर्ज हुआ। धरहरा के ठाकुरों और यादवों के बीच चल रही वर्चस्व की लड़ाई में यह पहली हत्या थी। उधर, इंद्रदेव सिंह की हत्या में नामजद किये जाने से बौखलाये यादवों ने इस घटना के कुछ ही दिनों बाद अखिलेश्वर सिंह के घर पर बमबाजी की। इसमें दो लोग घायल हुए। ठाकुरों और यादवों के बीच चल रही लड़ाई में एक नया मोड़ तब आया, जब 27 अगस्त 1984 की शाम को कुछ लोगों ने बृजेश सिंह के पिता भुल्लन सिंह की हत्या कर दी। उस दिन तीज का त्योहार था। भुल्लन सिंह पूजा का सामान ख़रीद कर बाजार से घर लौट रहे थे। गांव

2 जनवरी 1991 को गाजीपुर के कुड़ेसर गांव में एक काफिले पर बृजेश और त्रिभुवन गैंग के हमले में तीन लोग मारे गये। यह हमला काफिले में मुख्तार अंसारी के होने की आशंका में किया गया था लेकिन मुख्तार अंसारी इस काफिले में नहीं था।

में स्थित पानी की टंकी के पास हमलावरों ने उन पर पहले गोली चलायी और जब वह गिर पड़े तो उन्हें चाकुओं से गोद–गोद कर मार डाला। पिता की हत्या ने ही बृजेश के जीवन की दिशा बदल दी। उसने यह कसम खायी कि वह पिता के हत्यारों को छोड़ेगा नहीं। भुल्लन सिंह की हत्या में लुल्लुर सिंह, पांचू सिंह वगैरह के खिलाफ रिपोर्ट दर्ज हुई थी। पिता की हत्या के बाद बृजेश ने पढ़ाई छोड़ दी। वह रोज यह देखने के लिए कचहरी जाने लगा कि पिता की हत्या के अभियुक्त अदालत में हाजिर हुए या नहीं। कचहरी आते–जाते बृजेश की मुलाकात बर्खास्त सिपाही राजकिशोर के अलावा रिश्तेदार कालीदास से हुई। दोनों बृजेश की मदद के लिए आगे आये। कुछ दिनों बाद बृजेश बलुवा (चन्दौली) चला गया और वहां रहनेवाले अपने एक अन्य रिश्तेदार से भी अपनी मंशा बतायी। वह रिश्तेदार भी बृजेश की मदद करने को तैयार हो गया।

माफिया बृजेश के तार दाऊद इब्राहिम से भी जुड़े। दाऊद के लिए ही बृजेश गैंग ने मुम्बई के जे.जे. अस्पताल में उसके बहनोई के हत्यारों को गोलियों से भून दिया। लेकिन मुम्बई बमकाण्ड के बाद बृजेश और दाऊद के संबंध समाप्त हो गये।

पुलिस रिकार्ड के अनुसार बृजेश ने पहली हत्या धरहरा गांव में पांचू सिंह के ताऊ बनारसी सिंह की गोली मार कर की। पांचू सिंह बृजेश के पिता भुल्लन सिंह की हत्या का अभियुक्त था। तब बृजेश का नाम पहली बार पुलिस रिकार्ड में दर्ज हुआ। इस घटना को हुए अभी छह महीने भी नहीं गुजरे थे कि धरहरा में 20 मई 1985 को पांचू के पिता हरिहर सिंह की भी उनके घर के सामने ही गोली मार कर हत्या कर दी गयी। इस हत्याकाण्ड में भी बृजेश का नाम सामने आया। इसके बाद बलुआ (चन्दौली) में 9 अप्रैल 1986 को हुई सात यादवों की हत्या के बाद भाग रहे बृजेश को ग्रामीणों ने पकड़कर पुलिस के हवाले किया। सामूहिक हत्या के इस मामले में बृजेश लगभग एक साल तक जिला जेल में बंद रहा। जमानत पर छूटने के बाद वह फरार हुआ तो फिर पुलिस की गिरफ्त में नहीं आ सका।

सिकरौरा काण्ड जिसमें एक ही परिवार के सात लोगों की हत्या हुई थी, उसके पहले तक बृजेश सिंह की हर लड़ाई उसकी व्यक्तिगत लड़ाई थी। इस काण्ड में गिरफ्तारी के बाद मिली जमानत पर जब बृजेश फरार घोषित किया गया, तब तक अपराध की दुनिया में उभरती हुई ताकत के रूप में उसकी पहचान बन चुकी थी। फिर जैसे किसी भी बड़ी

ताकत के उभार के बाद छोटी–छोटी ताकतें उसके इर्द–गिर्द इकट्ठा होने लगती हैं, ऐसा ही बृजेश सिंह के साथ भी हुआ। बिन मांगे ही बहुत सारे हाथ उसकी मदद के लिए आगे बढ़े और अपराध की दुनिया की कई बड़े रुस्तमों के पैर इस नयी ताकत को देखकर ठिठके। इस दौरान दुश्मन का दुश्मन दोस्त और दोस्त का दुश्मन दुश्मन वाला फार्मूला चाहे–अनचाहे बृजेश की गतिविधियों के साथ जुड़ता चला गया। सिकरौरा और मुड़ियार की वारदातें इसी सिद्धान्त की प्रतिफल थी। सिकरौरा काण्ड में बृजेश सिंह का नाम एक पक्ष के मददगार के रूप में उभरकर सामने आया। इसी तरह मुड़ियार में भी एक पक्षविशेष के समर्थन के बदले बृजेश ने अपराध की दुनिया में डॉन के रूप में स्थापित हो चुके एक बड़ी ताकत मुख्तार अंसारी से अनचाहे दुश्मनी मोल ले ली। फिर दोनों गिरोहों की पहचान धुर प्रतिद्वंद्वियों के रूप में होने लगी लेकिन सच यही है कि बृजेश सिंह और मुख्तार अंसारी के बीच कोई जाती दुश्मनी नही थी। दोनों गुट अपने–अपने समर्थकों के समर्थन और विरोध के एवज में टकराते रहे और एक–दूसरे का खून बहाते रहे।

बात शुरू करते हैं सिकरौरा काण्ड से। सिकरौरा की घटना बृजेश की कोई अपनी दुश्मनी का परिणाम नहीं थी। बलुआ (चन्दौली) के सिकरौरा गांव में रहने वाले बृजेश के एक रिश्तेदार से उस गांव के यादवों की रंजिश चल रही थी। इस दौरान सिकरौरा में एक यादव परिवार के सात सदस्यों की हत्या हो गयी। इस हत्याकाण्ड मे बृजेश के रिश्तेदार तो फंसे ही, बृजेश को भी पुलिस ने गिरफ्तार किया। सिकरौरा काण्ड में गिरफ्तार होने के बाद बृजेश सिंह जब जमानत पर छूटा तो अपने पिता के हत्यारों से बदला लेने के लिए फिर निकल पड़ा। सिकरौरा काण्ड जैसी सामूहिक हत्या के मामले में बृजेश का नाम आने के बाद अपराध की दुनिया में उसे एक उभरती हुई बड़ी ताकत के रूप में जाना जाने लगा था। उन्हीं दिनों गाजीपुर के सैदपुर के मुड़ियार गांव में मकनू सिंह और राजेन्द्र सिंह दीवान के बीच जबर्दस्त रंजिश चल रही थी। वे एक–दूसरे के खून के प्यासे बन बैठे थे। उस समय तक गाजीपुर के मुख्तार अंसारी को भी अपराध की दुनिया में एक मजबूत ताकत के रूप में जाना जा चुका था। मुड़ियार गांव में मकनू सिंह और राजेन्द्र सिंह के बीच चल रही खूनी रंजिश में मुख्तार का मकनू सिंह का पूरा समर्थन मिल रहा था। मुड़ियार की इस लड़ाई में मुख्तार का सहयोग मकनू सिंह को मिलने पर जब राजेन्द्र

यह भी अफवाह उड़ चुकी है कि बृजेश सिंह मर गया है लेकिन तत्कालीन मुख्यमंत्री मायावती के ये आरोप लगाने पर कि बृजेश उनकी हत्या कर सकता है, अफवाह पर विराम लग गया।

सिंह दीवान कमजोर पड़ने लगा, तो उसने उस समय अपराध की दुनिया में उभर रही नयी ताकत बृजेश सिंह का साथ पकड़ लिया। राजेन्द्र सिंह दीवान से मित्रता होने के बाद बृजेश के लिए उसका मददगार बनना लाज़िमी था। बृजेश और राजेन्द्र सिंह दीवान के बीच मित्रता होने का एक और बड़ा कारण एक यह भी था कि राजेन्द्र सिंह का दुश्मन मकनू सिंह धरहरा निवासी और बृजेश के पिता के हत्यारों में एक लुल्लुर सिंह का साथ दे रहा था। इस तरह मुड़ियार में चल रही रंजिश में बृजेश को भी एक पक्ष के साथ होना पड़ा। उन्हीं दिनों किसी मामले में जिला कारागार में बन्द बृजेश सिंह के परिवार के एक सदस्य और मकनू सिंह के भाई साधु सिंह के बीच किसी बात को लेकर जमकर मारपीट हुई। साधु सिंह और कमलेश सिंह को अवैध असलहे रखने के आरोप में गाजीपुर की कोतवाली पुलिस ने गिरफ्तार किया था। जेल के भीतर हुई इस मारपीट में साधु सिंह बुरी तरह घायल हो गया। इस घटना के बाद प्रशासन ने साधु सिंह को गाजीपुर जेल स्थानान्तरित कर दिया। चूंकि साधु सिंह घायल था, इसलिए उसे वहां जिला अस्पताल में रखा गया था।

सम्मानित परिवार से ताल्लुक रखनेवाले मुख्तार अंसारी को अचूक निशानेबाज माना जाता है। शुरुआत में मुख्तार अंसारी मुहम्मदाबाद से गाजीपुर तक मोटरसाइकिल पर बैठकर मामूली ठेकेदारी करता था।

जिला अस्पताल में गिरफ्तार साधु सिंह पर उसके दुश्मनों के लिए निशाना साधने का एक सुनहरा मौका था। उस पर हमले की रणनीति तय होने लगी। बृजेश, त्रिभुवन और उसके साथी हमले के लिए घात लगाये बैठे थे। गाजीपुर के जिला अस्पताल में भर्ती रहने के दौरान 22 नवम्बर 1989 को साधु सिंह की कुछ लोगों ने दिनदहाड़े गोली मारकर हत्या कर दी। हत्यारे खाकी वर्दी में आये थे और उन्होंने पूरी घटना को फिल्मी ढंग से अंजाम दिया था। साधु सिंह की हत्या में भी बृजेश सिंह का नाम चर्चा में आया। साधु सिंह की हत्या के बाद से ही मुख्तार और बृजेश गिरोह एक दूसरे से टकराने लगे। चार जनवरी 1990 को वाराणसी जिले के चौबेपुर थाने का धरहरा गांव बारूदी गंध से महक उठा। इस गांव का गोपालदास सेठ गोलियों का निशाना बन गया। कहा जाता है कि गोपाल दास बृजेश को आर्थिक रूप से मदद करता था। उसकी हत्या में मुख्तार अंसारी के खास मायाशंकर सिंह, राजेश सिंह, ओमप्रकाश सिंह, वंशीधर सिंह के खिलाफ मुकदमा दर्ज हुआ। इस घटना के प्रतिरोध में त्रिभुवन और बृजेश गैंग भी आक्रामक हो गया।

2004 में एस.टी.एफ. ने दो पूर्व सैनिको को एल.एम.जी. के साथ गिरफ्तार किया। इनका कहना था कि वो एल.एम.जी. मुख्तार अंसारी को देने के लिए लाये थे। इस मामले में कार्रवाई की इजाजत न मिलने पर एस.टी.एफ के एक डी.एस. पी ने नौकरी से इस्तीफा दे दिया था।

घटना के ठीक 48 घण्टे बाद 6 जनवरी 1990 को सकरारी गांव में वंशीधर सिंह के परिवार के रामाधीन सिंह को गोलियों का निशाना बना दिया गया। इस मामले में साहब सिंह, उमाकान्त सिंह और त्रिभुवन सिंह के खिलाफ मुकदमा दर्ज कराया गया। बताते हैं कि जब दोनों गिरोह हिसाब–किताब बराबर करने में जुटे तो मुख्तार के इशारे पर खासतौर से बृजेश गैंग के आर्थिक मददगारों को निशाना बनाया जाने लगा। इसी क्रम में 24 मार्च 1990 को ठेका लेने के सिलसिले में वाराणसी जिले के कैण्ट थाना क्षेत्र के हुकुलगंज में शंभूनाथ की हत्या कर दी गयी। इस मामले में मायाशंकर सिंह और ओमप्रकाश लुल्लुर समेत कई लोगों के खिलाफ मुकदमा दर्ज हुआ। फिर मुख्तार अंसारी ने 8 जून 1990 को साधुशरण के हत्यारे साहब सिंह को वाराणसी न्यायालय परिसर के गेट पर गोली मार दी। वह उस समय गाड़ी से उतर रहा था। कहा जाता है कि साधु सिंह मुख्तार अंसारी का गुरु था। इस गैंगवार में कई सदस्य मारे गये। इस बीच बृजेश का अपने पिता के हत्या अभियुक्तों से बदला लेने का सिलसिला भी जारी रहा। बृजेश के पिता के हत्याभियुक्त लुल्लुर सिंह के बड़े भाई प्रेमप्रकाश सिंह को वाराणसी के चकबन्दी कार्यालय के भीतर दिनदहाड़े गोलियों से भून दिया गया। इस वारदात में भी बृजेश का ही नाम चर्चा में आया। कहा गया कि पिता के हत्यारों से बदला लेने के क्रम में ही बृजेश ने प्रेमप्रकाश सिंह को मार डाला।

इसी तरह त्रिभुवन का एक रिश्तेदार रणजीत सिंह गैंग में प्रमुख शूटर की भूमिका में था। उसके रहते मुख्तार को खतरे की आशंका हर पल बनी रहती। 23 जनवरी 1991 को रणजीत की हत्या गाजीपुर कोतवाली के सिकंदरपुर गांव में कर दी गयी। इस मामले में मुख्तार अंसारी, कमलेश सिंह, मैनेजर सिंह और रामू मल्लाह के खिलाफ हत्या का मुकदमा दर्ज कराया गया। वर्ष 1991 में विधानसभा का चुनाव चल रहा था। मुख्तार के बड़े भाई अफज़ाल अंसारी मुहम्मदाबाद क्षेत्र से विधानसभा में तीसरी बार जाने के लिए

अपनी तकदीर आजमा रहे थे। चुनाव संचालन में मुख्तार की सक्रियता बढ़ी हुई थी। इस बीच बृजेश और त्रिभुवन को पता चला कि मुख्तार का काफिला जनसम्पर्क में निकला है। बस गिरोह ने हमले की रणनीति बना ली। बात 2 मई 1991 की है। गाजीपुर जिले के भांवरकोल थानान्तर्गत कुड़ेसर गांव से अफजाल अंसारी के समर्थक कामरेड सुरेन्द्र राय, कमला सिंह और मानिक गुप्ता चुनाव प्रचार में जा रहे थे। इस गाड़ी पर बृजेश और त्रिभुवन गैंग ने मुख्तार अंसारी और कमलेश के भ्रम में हमला कर दिया। बृजेश और त्रिभुवन की गोलियों से सुरेन्द्र राय, कमला और मानिक गुप्ता घटनास्थल पर ही मारे गये। पांच अज्ञात लोगों के खिलाफ मुकदमा दर्ज हुआ लेकिन पुलिस विवेचना में बृजेश सिंह, त्रिभुवन सिंह, कालीदास, उमाकांत सिंह और सत्येंद्र कुमार उर्फ पप्पू का नाम सामने आया। 22 जून 1991 को ओमप्रकाश लुल्लुर के परिवार के सूर्यनाथ को गांव में ही बृजेश और त्रिभुवन ने गोली मार दी। इस घटना में बृजेश के बड़े भाई चुलबुल सिंह, संतोष सिंह, हृदयनारायण सिंह, प्रह्लाद सिंह, सत्येन्द्र उर्फ पप्पू को अभियुक्त बनाया गया।

प्रतिशोध की अपनी लड़ाई को अंजाम तक पहुंचाने के लिए जब बृजेश ने जाने–अनजाने अपराध की दुनिया की ओर कदम बढ़ाये तो गिरोहबंदी लाजिमी हो गयी। ऐसे में बाकी गिरोहों से दुश्मनी भी तयशुदा थी और गिरोहों की टकराहट भी बेहद स्वाभाविक थी। नजीजतन वारदातों की फेहरिस्त लम्बी होती चली गयी। यह वही समय था जब उत्तर प्रदेश की राजनीति पर राजनेताओं, धनबलियों और बाहुबलियों की तिकड़ी पूरी तरह हावी हो चुकी थी। ऐसे में अपराध जगत में अचानक उभरे बृजेश सिंह की अनदेखी कतई नामुमकिन थी।

बृजेश सिंह को हथियार के रूप में इस्तेमाल करने की गरज से कुछ नेताओं ने उसे परोक्ष–अपरोक्ष सरपरस्ती देना शुरू किया। ऐसे लोगों की मदद के चलते ही बदले की आग सीने में दबाये अपनी जंग लड़ने निकला बृजेश सिंह माफिया डॉन के रूप मे स्थापित हो गया। नयी ताकत के रूप में बृजेश सिंह की अपराध जगत में एक समानान्तर सत्ता स्थापित होती चली गयी। इसकी सीमा पूर्वांचल से कहीं आगे बिहार, बंगाल, महाराष्ट्र और गुजरात समेत देश के लगभग सभी महानगरों तक जा पहुंची। विभागों के ऊंची दर वाले टेण्डर उसकी मर्जी से खुलने लगे। सोना उगलने वाले धंधों मसलन कोयला, शराब, रेशम जैसे अन्य व्यवसायों में उसकी दखल की धमक महसूस की जाने लगीं। अब दबदबे की

मुख्तार अंसारी के बारे में मशहूर है कि किसी भी स्थान पर जाने से पहले अपने करीबियों को भी उसकी जानकारी नही देते।

यह लड़ाई व्यक्तिगत न होकर गैंगवार की शक्ल लेने लगी। गिरोहों की टकराहट के मायने बदलने लगे। अभी तक जो टकराव अपराध जगत में सिर्फ दबदबे के लिए होता चला आया था, उसकी दिशा बदल गयी। इसने व्यावसायिक टकराव का रूप लेना शुरू कर दिया।

यह नब्बे के दशक के शुरू का वह समय था, जब बृजेश गिरोह में कई खूंखार अपराधी शामिल हो चुके थे। उनका गिरोह अत्याधुनिक असलहों से लैस हो चुका था। पूर्वांचल के तमाम ठेके और टेण्डरों पर इस गिरोह की दखल होने लगी। उन दिनों आजमगढ़ के वीरेन्द्र सिंह टाटा का शराब व्यवसाय पर वर्चस्व तेजी से बढ़ता चला जा रहा था। कारण यह था कि टाटा पर बृजेश सिंह का हाथ था। उस समय कुछ लोग यह भी कहते थे कि टाटा महज एक केयरटेकर के रूप में व्यवसाय कर रहा था, उसका असली मालिक बृजेश सिंह ही था। बहरहाल बृजेश के गैंग में वीरेन्द्र सिंह टाटा की आमद उसके लिए सबसे ज्यादा लाभकारी रही। आज़मगढ़ के जहानाबाद थाना क्षेत्र के रौनापुर गांव का वीरेन्द्र सिंह टाटा पहले बिहार और बंगाल में सक्रिय था। उस पर बंगाल और बिहार दोनों ही पुलिस ने इनाम रखा था। उसी ने आज़मगढ़ लौटने के बाद मनबढ़ युवकों और उभरते अपराधियों को पैसा और असलहा देना शुरू किया। बाद के दिनों में बृजेश और वीरेन्द्र सिंह टाटा के बीच किसी बात को लेकर विवाद हो गया। इसी दौरान एक मामले में टाटा को पुलिस ने गिरफ्तार कर जेल भेज दिया। टाटा को जब अदालत में पेश करने के लिए पुलिस सुरक्षा में ले जाया जा रहा था, तभी अंधाधुंध फायरिंग कर उसकी हत्या कर दी गयी। यह हत्या पूरी तरह फिल्मी अंदाज में की गयी थी। बताते हैं कि टाटा को जिस वैन से कचहरी ले जाया जा रहा था, उस पर कुछ पुलिसकर्मी सवार थे। पुलिस की एक और वैन उस गाड़ी के ठीक पीछे सुरक्षा में लगी हुई थी। हत्यारे ट्रक और मारुति जिप्सी पर सवार होकर आये थे। कचहरी की ओर जा रही पुलिस के दोनों वाहनों के बीच पहले ट्रक ने आकर आड़ बनायी। इसी दौरान जिप्सी पर सवार बदमाशों ने वीरेन्द्र सिंह

कहा जाता है कि 1970 के दशक में इंदिरा गांधी के पुत्र संजय गांधी बाहुबलियों और उनके गुर्गों से घिरे रहते थे। साथ रायबरेली से लेकर पूरे राज्य में उनकी इच्छाएं पूरी करने के लिए फरमान जारी करते रहते थे।

टाटा को गोलियों से भून डाला। वीरेन्द्र सिंह टाटा की हत्या में भी बृजेश सिंह का नाम आने पर उसके नाम की दहशत और बढ़ गयी।

बृजेश के खौफ के चलते ही उसके पिता की हत्या का मुख्य सूत्रधार रघुनाथ यादव धरहरा गांव छोड़कर गुजरात के मेहसाड़ा में रहने लगा था, पर वहां उसकी कुछ लोगों ने हत्या कर दी। रघुनाथ की हत्या में भी बृजेश सिंह का नाम आया। कहा गया कि अपने पिता की हत्या का बदला लेने के लिए वह रघुनाथ का पीछा करते हुए गुजरात तक जा पहुंचा था। यह घटना बृजेश सिंह के पूरे देश में फैले नेटवर्क की नजीर मानी गयी। हालांकि रघुनाथ यादव की हत्या के मामले में गुजरात पुलिस बृजेश का कोई सुराग नहीं पा सकी। अलबत्ता घटना के कुछ दिनों बाद ही गुजरात पुलिस ने इस मामले में बृजेश सिंह के पिता के मित्र दया सिंह को धरहरा गांव से गिरफ्तार किया। इस मामले में दया सिंह कई वर्ष तक टाडा में भी निरुद्ध रहा।

11 सितम्बर 1998 को गाजियाबाद में एक मुठभेड़ में एस. टी.एफ. ने मुन्ना बजरंगी को गोलियों से छलनी कर दिया था और यह मान लिया था कि वह मर गया है लेकिन इस मुठभेड़ में बजरंगी मरा नहीं। मजबूरी में उसे गिरफ्तार करना पड़ा।

पिता के हत्यारों से बृजेश के बदला लेने का सिलसिला यहीं नही खत्म हुआ। बृजेश के पिता की हत्या के अभियुक्तों में एक मायाशंकर सिंह के बड़े भाई दयाशंकर सिंह की चन्दौली के अवाजापुर गांव में गोली मारकर हत्या कर दी गयी। मायाशंकर के एक और सहयोगी भोला सिंह को धरहरा में गोलियों से भून दिया गया। इन हत्याओं में भी बृजेश सिंह का नाम चर्चा में आया। इस दौरान बृजेश से जुड़े कई लोग भी मारे गये। 11 दिसम्बर 1991 को वाराणसी में न्यायालय सप्तम अतिरिक्त जिला जज के कोर्ट में पेशी के दौरान मुख्तार अंसारी का दोस्त मायाशंकर सिंह जब वापसी में सीढ़िया उतर रहा था, तब उस पर बृजेश सिंह गैंग ने अंधाधुंध गोलियां बरसायीं। इस हमले में मायाशंकर तो बच गया, लेकिन उसे पेशी पर लेकर गये सिपाही बैकुंठनाथ पांडेय की मौके पर ही मौत हो गयी। बृजेश के पिता के मित्र अखिलेश्वर सिंह उर्फ बच्चा सिंह को धरहरा गांव में ही प्रतिद्वंद्वियों ने मार डाला। बृजेश गिरोह के माने जाने वाले वासुदेव सिंह की भी हत्या धरहरा गांव में प्रतिद्वंद्वियों ने कर दी।

कक्षा पांच के बाद मुन्ना बजरंगी ने कभी स्कूल की तरफ पलट कर नहीं देखा। पुलिस का मानना है कि वह आदतन अपराधी है।

इन सारी वारदातों के बाद बाहर की दुनिया से कई गुना तेज प्रतिक्रिया अण्डरवर्ल्ड में महसूस की जाने लगी। हालांकि बृजेश सिंह गैंग के लोग भी मारे जा रहे थे लेकिन बृजेश सिंह की ताकत सिर चढ़कर बोल रही थी। इलाके में बृजेश सिंह की बात को नकारने की जुर्रत शायद कोई नही जुटा पा रहा था। यही वजह थी कि कई अन्तरराष्ट्रीय गिरोह भी इस नयी ताकत से हाथ मिलाने को आतुर थे। परिस्थितियोंवश बृजेश के तार माफिया डॉन दाऊद इब्राहिम से खुद–ब–खुद जा जुड़े। इन चर्चाओं को आधार तब मिला जब माफिया डॉन दाऊद के बहनोई के हत्यारे को कुछ लोगों ने मुम्बई के मशहूर जे. जे. अस्पताल के छठवें तल पर जाकर अत्याधुनिक असलहों से भून दिया। इस घटना के बाद भी बृजेश सिंह का नाम मुम्बई सहित देश के तमाम अखबारों की सुर्खियों में पाया गया और नाम की हनक जेद्दा और दुबई तक महसूस की गयी। लेकिन मुम्बई बमकांड के बाद उसके दाऊद से संबंध समाप्त हो गये।

जे.जे. अस्पताल काण्ड में बृजेश सिंह का नाम आने से महाराष्ट्र पुलिस सक्रिय हुई, लेकिन बृजेश उसके हाथ नही लगा। इस मामले में महाराष्ट्र पुलिस ने जिन अभियुक्तों को गिरफ्तार किया था, उनमें से कुछ को अदालत ने मौत की सजा सुनायी। माना जाता है कि जे.जे. अस्पताल काण्ड में अदालत के फैसले के साथ ही बृजेश सिंह की घर वापसी के सारे रास्ते बन्द हो गये। फिर भी बृजेश सिंह के नाम को लेकर तरह–तरह की चर्चाएं होती रहती हैं।

लोग उसके आत्मसमर्पण और राजनीति में प्रवेश के भी कयास बराबर लगाते रहे हैं। कभी पुलिस की तो कभी राजनेताओं की टिप्पणियों से बृजेश का नाम अखबारी सुर्खियों में बराबर छाया रहता है। मगर अपराध और कानून के जानकारों का अपना मानना है कि बृजेश अब अगर चाहे भी तो अपनी पुरानी दुनियां में लौटना उसके लिए बेहद मुश्किल होगा। जे.जे. अस्पताल काण्ड जैसी वारदातों पर आये फैसले और पुलिस के रजिस्टर में दर्ज कई भारी–भरकम धाराएं, उसकी वापसी की राह में रोड़ा साबित होंगी।

गायब बृजेश सिंह पर लोगों ने ये भी आशंका जतायी कि वो ज़िंदा नही है। लेकिन उसके परिवार वालों का कहना है कि वो अभी जिंदा है। कहा जाता है कि 15 जुलाई 2001 को जब मुख्तार और बृजेश ऊसरी चट्टी में जब आमने–सामने भिड़े तो एक गोली बृजेश सिंह को भी लगी, तभी से यह कहा जाने लगा कि उसका अंत हो गया। लेकिन उसके

जिंदा होने पर उस समय से प्रश्नचिह्न लगना खत्म हो गया, जब उत्तर प्रदेश की तत्कालीन मुख्यमंत्री मायावती ने ये आरोप लगाया कि बृजेश सिंह उनकी हत्या करना चाहता है। बहरहाल सी.बी.आई. बृजेश सिंह को खोज रही है, उस पर दो लाख रुपये का इनाम घोषित है। बृजेश सिंह का गैंग वाराणसी, गाजीपुर, बलिया, मऊ, जौनपुर, गोरखपुर, चंदौली, कोलकाता से लेकर विदेशों तक मे फैला हुआ है। आरोप ये भी है कि दर्जनभर से ज्यादा पूर्व और वर्तमान विधायक सांसद बृजेश सिंह के खास रहे हैं। यह सच्चाई है कि माफिया सरगना बृजेश सिंह और त्रिभुवन सिंह की कहानी एक ही जैसी है और दोनों ने अपराध भी साथ–साथ ही किये। शायद यही वजह है कि बृजेश सिंह की बात करें या त्रिभुवन की, दोनों की कहानी में अंतर करना मुश्किल हो जाता है। ये सब लोग जानते हैं कि बृजेश और त्रिभुवन शुरू से ही दो जिस्म एक जान रहे हैं। वर्ष 1989 से फरार ये दोनों कुख्यात बदमाश एक साथ लापता रहे।

कहा जाता है कि मुन्ना बजरंगी की कृष्णानन्द राय से कोई दुश्मनी नहीं थी लेकिन उसने अपने बाहुबली आका को खुश करने के लिए कृष्णानन्द राय की हत्या की।

दोनों की कहानी गाजीपुर से शुरू होती है। गाजीपुर में गैंगवार की शुरूआत सत्तर के दशक में हुई। 25 जून 1984 को सैदपुर से मुड़ियार जाते समय जिस रामपति सिंह की हत्या हुई, वो दो लाख के इनामी शूटर त्रिभुवन सिंह के पिता थे। सैदपुर के मुड़ियार गांव में पांच बीघा जमीन के लिए मकनू सिंह और साधू सिंह ने माफिया सरगना त्रिभुवन सिंह के पिता ग्राम प्रधान रामपति सिंह की हत्या कर गैंगवार के जो बीज बोये, उसकी जड़ें गाजीपुर से फैलते–फैलते भारत के विभिन्न हिस्सों तक गयीं। ये जड़ें अब दुनिया के कई अन्य मुल्कों की ओर रुख कर रही हैं, जहां अपराधियों ने अपने शरणगाह बना रखे हैं। नफरत की चिंगारियों ने शोलों का रूप लिया है। इस गैंगवार में अब तक सैकड़ों लोगों की जान जा चुकी है। इस गैंगवार में कई सुहागनों का सिंदूर मिटा और चूड़ियां टूटी तो ऐसी भी कई महिलाएं हैं जिन्होंने अपने जवान बेटों को खोया है। पूर्वांचल सुलग रहा है, तो दूसरे राज्यों में भी धमाके हुए हैं। जो भी इस गैंगवार के दलदल में फंसा, मौत उसके आस–पास नाचने लगी। जान लेने या जान देने के सिवा अब इनके सामने कोई दूसरा चारा नही है। और हां, इस दलदल से निकलना आसान नही है क्योंकि जिनसे दुश्मनी है वो तब तक पीछा नही छोड़ेंगे, जब तक जान न ले लें। जो जितना बड़ा बाहुबली

है, उस पर उतना ही बड़ा खतरा है। रही बात समर्थकों की तो छोटे–छोटे समर्थक मरते ही रहते हैं, उनकी गिनती ही कौन करता है। कभी कोई व्यापारी मरता है, कभी ठेकेदार, कभी सुरक्षाकर्मी और कभी गांव का किसान।

लोगों को आश्चर्य हो सकता है लेकिन सच्चाई यह है कि पूर्वांचल में गैंगवार के नाम पर जो कुछ भी हो रहा है, इसकी नींव बीस बीघा जमीन के लिए पड़ी। गाजीपुर जिले के सैदपुर कस्बे से तीन किलोमीटर उत्तर–पूर्व सड़क के भितरी मार्ग पर मुड़ियार ग्राम स्थित है। यह ठाकुर बाहुल्य आबादी वाला गांव है। इसी गांव के रामपति सिंह, श्यामनारायण सिंह और रमाशंकर सिंह आपस में पट्टीदार थे। ग्राम प्रधान रामपति सिंह के छह लड़के राजेन्द्र सिंह, वीरेन्द्र सिंह उर्फ लोहा सिंह, राम विलास सिंह, विजय शंकर सिंह, रामनगीना सिंह और त्रिभुवन सिंह थे। मुड़ियार के दो सगे भाइयों मकनू सिंह व साधू सिंह का अपने चाचा रामपति सिंह से पांच बीघा जमीन के लिए झगड़ा चला। एक दिन जब रामपति सिंह इसी विवादित जमीन को हलवाहों से जोतवा रहे थे, तभी मकनू सिंह और साधू सिंह ने वहां पहुंचकर रामपति सिंह की गोली मारकर हत्या कर दी। इसके बाद रामपति सिंह के बेटों ने अपने पिता की हत्या का बदला लेने की कसम खायी। इस काम के लिए उन्होंने तत्कालीन माफिया सरगना सिकन्दरपुर निवासी रणजीत सिंह से सम्पर्क किया। रणजीत सिंह के ही दिशानिर्देशन में इन लोगों ने आगे की रणनीति बनानी शुरू की। ठीक इसी के आस–पास वाराणसी के चौबेपुर थाना क्षेत्र स्थित धरहरा गांव में माफिया डॉन बृजेश सिंह के पिता की भी हत्या हो गयी। यह अजीब इत्तेफाक था कि बाद के दो जिगरी दोस्त उस समय अपने–अपने पिता के हत्या की इंतकाम की आग में जल रहे थे। इसी दौरान सिकन्दरपुर में ही त्रिभुवन सिंह तथा उसके भाइयों की मुलाकात अपने पिता की हत्या का बदला लेने के लिए आये धरहरा निवासी बृजेश सिंह तथा उसके मित्र साहब सिंह से हुई। कहा जाता है कि शुरुआत में इस पूरे गैंग का संचालन रणजीत सिंह के नेतृत्व में गोरखपुर के तत्कालीन माफिया डॉन वीरेन्द्र शाही करते थे।

यह भी अफवाह उड़ी कि मुन्ना बजरंगी को लकवा मार गया है लेकिन उसने अपने अपराधों से इसका खण्डन किया। बृजेश सिंह, त्रिभुवन सिंह और संजीव जीवा जैसे माफिया अपनी मौत की अफवाह उड़वा चुके हैं।

प्रेमप्रकाश उर्फ मुन्ना बजरंगी १५ साल की उम्र में ही अपराध के रास्ते पर चल पड़ा। पहले मुन्ना बजरंगी एक बस कंडक्टर था।

दूसरी तरफ, त्रिभुवन सिंह के पिता के कथित हत्यारे मकनू सिंह व साधू सिंह ने भी हरिहर सिंह, बंसी सिंह, पांचू सिंह, कमलेश प्रधान, रूदल सिंह, अरुण सिंह तथा मुख्तार अंसारी को लेकर एक दबंग गैंग तैयार कर लिया। इनका संचालन गोरखपुर के ही दूसरे माफिया सरगना द्वारा होता था। वर्ष 1984 में रणजीत सिंह, त्रिभुवन सिंह आदि ने रणनीति बनाकर सिंचाई विभाग कॉलोनी में मकनू सिंह की दिनदहाड़े गोली और बम मारकर हत्या कर दी। अपने भाई की हत्या का बदला लेने के लिए साधू सिंह ने अपने विपक्षी वीरेन्द्र सिंह व शिवशंकर सिंह की गोली मारकर हत्या कर दी। अब तक दोनों गिरोहों की तस्वीर भी खुलकर सामने आ गयी थी। दोनों गिरोह एक–दूसरे के खून के प्यासे हो गये थे।

वाराणसी पुलिस लाइंस में त्रिभुवन सिंह का बड़ा भाई हेड कांस्टेबल राजेन्द्र सिंह रहता था। बात 25 अक्टूबर 1988 की है। पुलिस लाइंस परिसर में घुसकर राजेन्द्र सिंह की हत्या कर दी गयी। इस मामले में आजमगढ़ जिले के ढकवा निवासी वशिष्ठ नारायण सिंह ने वाराणसी के थाना कैण्ट में मुकदमा दर्ज कराया। घटना में मुख्तार अंसारी, भीम सिंह, साधुशरण सिंह, कमलेश सिंह, हरिहर सिंह, वीरेन्द्र सिंह और वंशीधर सिंह नामजद किये गये। पुलिस लाइंस परिसर में ट्रैफिक पुलिस के एक हेड कांस्टेबल की हत्या किये जाने के बाद इस गैंग की तूती बोलने लगी। इतना ही नहीं, मुकदमा दर्ज कराने वाले वशिष्ठ नारायण सिंह को भी इस गैंग की ओर से धमकियां मिलने लगी। चूंकि वशिष्ठ नारायण सिंह मारे गये पुलिसकर्मी का साला था इसलिए उसने पैरवी की हिम्मत जुटायी। त्रिभुवन के सबसे बड़े मददगार के रूप में साहब सिंह, रणजीत सिंह और बृजेश खुलकर साथ आ गये और त्रिभुवन भी उनकी मदद के लिए कुछ भी करने को आमादा हो गया।

धरहरा गांव में 8 दिसम्बर 1988 को मुख्तार अंसारी गैंग से सम्बंधित राजीव कुमार की हत्या कर दी गयी। राजीव मुख्तार के खास आदमी ओमप्रकाश उर्फ लुल्लुर का भतीजा था। लोग मानते है कि इस घटना में त्रिभुवन सिंह और साहब सिंह शरीक रहे लेकिन उन्हें नामजद नहीं किया गया। घटना में तीर्थेश्वर सिंह, बृजेश सिंह और हृदयनारायण सिंह नामजद किये गये। इन तीनों भाइयों के अलावा बाहर के किसी आदमी पर मुकदमा दर्ज नहीं हुआ। ओमप्रकाश गैंग बृजेश की जान का दुश्मन हो गया। अब

तक माफिया त्रिभुवन सिंह के परिवार में पिता और तीन भाई समेत चार लोग मारे जा चुके थे।

इस बीच दबंग सच्चिदानन्द राय की हत्या हो गयी। इसी हत्याकाण्ड के बाद मुहम्मदाबाद इलाके में राजनीतिक हत्याओं का दौर शुरू हो गया। साधु सिंह की हत्या हुई। इससे विरोधियों को सब्र नहीं हुआ तो उनके परिवार के दो और लोगों को मौत के घाट उतार दिया गया। इसके बाद साधु के हत्यारे साहब सिंह की हत्या हुई। यहीं से मुख्तार अंसारी और बृजेश सिंह के बीच अदावत के असली बीज पड़े। कुछ दिनों बाद मुख्तार अंसारी और उसके साथियों पर माफिया सरगना रणजीत सिंह की उसके घर सिकंदरपुर में हत्या करने का आरोप लगा। बाद में अदालत ने इस हत्याकाण्ड में मुख्तार अंसारी को बरी भी कर दिया।

कल्याण सिंह, राम प्रकाश गुप्त, राजनाथ सिंह, मायावती और मुलायम सिंह यादव सबने अपने मुख्यमंत्रित्व काल में बाहुबली हरिशंकर तिवारी को अपने मंत्रिमण्डल में जगह दी।

इसके बाद हत्याओं का छिटपुट दौर दोनों तरफ से चलता रहा। दोनों गैंगों ने इसी बीच बस का ठेका, रंगदारी आदि से अकूत धन कमाया। साधू सिंह की हत्या के बाद उनके गैंग में दरार पड़ गयी और उनका गैंग दो धड़ों में बंट गया। फिर शुरू हुआ राजनीति में रसूख़ हासिल करने का सफर। इन लोगों को लगा कि राजनीति के जरिये जहां वह अपनी छवि बेहतर बना सकते हैं, वहीं उन पर पुलिसिया दबाव कम होगा। साथ ही कहीं न कहीं उन्हें ये विश्वास हो गया कि उन्हें चुनाव जीतने में कठिनाई नहीं होगी। अरुण सिंह और मुख्तार अंसारी अब गाजीपुर की सक्रिय राजनीति में उतर आये। अरुण सिंह पहले कांग्रेस, इसके बाद राजनाथ सिंह के नेतृत्व में भाजपा में चले गये। भाजपा से वह जिला सहकारी बैंक के चेयरमैन भी चुने गये। वह विधानसभा चुनाव लड़े, लेकिन सफलता नहीं मिली। मुख्तार अंसारी ने पहले गाजीपुर सदर विधानसभा सीट से चुनाव लड़ा लेकिन सफलता नहीं मिली। इसके बाद मुख्तार अंसारी मऊ सदर से विधायक चुने गये।

बृजेश सिंह व त्रिभुवन सिंह भूमिगत रहकर ही अपने गैंग का संचालन करने लगे। इस बीच त्रिभुवन सिंह का भतीजा अनिल सिंह बड़े सरगना के रूप में उभरा। अनिल सिंह ने वाराणसी और गाजीपुर में ताबड़तोड़ हत्या कर अपराध जगत में अपना सिक्का जमा

लिया। बृजेश सिंह खुद तो राजनीति में नहीं उतरा लेकिन उसने अपने लोगों को राजनीति में इंट्री दिलवानी शुरू कर दी। बृजेश सिंह के भाई चुलबुल सिंह भाजपा के एमएलसी बने। राजनीतिक ध्रुवीकरण के चलते कृष्णानन्द राय मुहम्मदाबाद से अफजाल अंसारी के विरूद्ध विधानसभा का चुनाव लड़े। पहली बार तो उन्हें सफलता नहीं मिली लेकिन दूसरी बार उन्होंने अफजाल अंसारी को पराजित कर दिया। यही बात मुख्तार अंसारी को सबसे ज्यादा खली क्योंकि अफ़ज़ाल अंसारी की हार पर मुख्तार अंसारी को लगा कि उसका वर्चस्व टूटा है। मुख्तार अंसारी जैसे व्यक्ति के लिए इस हार को पचाना आसान नही था, यह बात भी जाहिर है।

कहा जाता है कि 1988 में इलाहाबाद के उपचुनाव में पार्टी के प्रचार के लिए तत्कालीन मुख्यमंत्री वीर बहादुर सिंह ने एक हिस्ट्रीशीटर भुक्खल महाराज को जमानत पर छुड़वा लिया था।

वैसे अगर नज़र डाले तो गाजीपुर के एक प्रतिष्ठित और सम्मानित परिवार से ताल्लुक रखने वाले मुख्तार अंसारी की ज़िदगी भी खासी रोमांचक रही है। अचूक निशानेबाज के रूप में पहचाने जानेवाले मुख्तार अंसारी ने मुहम्मदाबाद से गाजीपुर तक मोटरसाइकिल पर बैठकर मामूली ठेकेदारी से अपना सफर शुरू किया। मुख्तार अंसारी के खिलाफ वर्ष 1988 में हत्या का पहला मामला दर्ज हुआ। पुलिस डायरी के अनुसार मुख्तार अंसारी से जुड़े लोगों के पास ए.के.–47, 56 से लेकर कई प्रकार की विदेशी रायफलें और मैग्नम की कीमती पिस्तौल मौजूद हैं। मुख्तार अंसारी ने वर्ष 1991 में कल्याण सिंह के कार्यकाल में विश्व हिंदू परिषद के कोषाध्यक्ष और कोयला व्यापारी नंदकिशोर रूंगटा के अपहरण के बाद पंजाब और हरियाणा में फरारी काटी। कहा जाता है कि इस दौरान उसने हथियारों का लम्बा–चौड़ा जखीरा जुटाया। वर्ष 1994 में समाजवादी पार्टी और बहुजन समाज पार्टी दोनों ने मुख्तार अंसारी को अपने पक्ष में करने की कोशिश की। वर्ष 1994 में मुख्तार अंसारी ने जेल में रहते हुए गाजीपुर का उपचुनाव लड़ा, लेकिन हार गये। राजबहादुर चुनाव जीते। इसके बाद वर्ष 1995 में मुख्तार अंसारी के भाई अफजाल अंसारी समाजवादी पार्टी में शामिल हो गये। इसी के साथ मुख्तार अंसारी का राजनीतिक कद बढ़ने लगा। उसके मुकदमे वापस करने का सिलसिला शुरू हुआ। इस दौरान गाजीपुर में एक आई. पी.एस. से मुख्तार अंसारी की ठनी। राजनीतिक दबाव के आगे न झुकने पर उन्हें लम्बी छुट्टी पर जाना पड़ा। फिरौती के लिए अपहरण, हत्या और जबरन वसूली जैसे मामलों

के अभियुक्त मुख्तार अंसारी को मायावती और मुलायम सिंह यादव दोनों सरकारों ने अभयदान दिया। उन्होंने अपना राजनीतिक, आपराधिक और आर्थिक साम्राज्य जौनपुर, वाराणसी, गाजीपुर, मऊ समेत दर्जनभर जिलों में फैला लिया। 1996 में मुख्तार अंसारी विधानसभा पहुंचा। धीरे–धीरे मुख्तार अंसारी का कद काफी बड़ा हो गया और सरकार में उसकी तूती बोलने लगी। 2004 में स्पेशल टास्क फोर्स ने सेना छोड़ने वाले ऐसे दो व्यक्तियों को गिरफ्तार किया, जो चुपके से मुख्तार अंसारी को एल.एम.जी. और कारतूस मुहैया करा रहे थे। इस पर एस.टी.एफ. के शैलेन्द्र सिंह ने मुख्तार अंसारी पर कार्रवाई की इजाज़त मांगी और इजाज़त न मिलने पर उन्हें पुलिस की नौकरी से इस्तीफा देने पर मजबूर होना पड़ा। इसके बाद जुलाई 2005 में एस.टी.एफ. और जौनपुर पुलिस ने कुछ अपराधियों से पूछताछ की। उस पूछताछ में आरोप लगा कि मुख्तार अंसारी वाराणसी के सांसद राजेश मिश्रा की हत्या को साजिश रच रहे थे। इन सब साजिशों, हमलों, षड़यंत्रों, वसूली, अपहरण के आरोप और राजनीतिक कद बढ़ाने की कोशिश के साथ–साथ मुख्तार अंसारी की बृजेश सिंह से दुश्मनी का सफर भी जारी रहा। दोनों गैंगों के बीच वर्चस्व की लड़ाई गहराती रही। इन दोनों गैंगों ने जातिगत आधार पर नौजवानों को एकजुट करने की कोशिश की और उन्हें कामयाबी भी मिली। इसका सबसे ज्यादा फायदा मुख्तार अंसारी ने उठाया। उसने यादवों, भूमिहारों और मुसलमानों का गठजोड़ खड़ा किया। इसके बदौलत लम्बे समय तक अफजाल अंसारी विधानसभा में पहुंचते रहे। जैसे–जैसे जातिगत ज़हर ने पूर्वांचल में पांव पसारे, बृजेश सिंह

बाहुबलियों का अपने क्षेत्र में अलग ही रसूख़ है। अगर गाजीपुर, मऊ, वाराणसी में मुख्तार अंसारी का वर्चस्व है तो हरिशंकर तिवारी की गोरखपुर में तूती बोलती है। गोण्डा–बलरामपुर में बृजभूषण शरण सिंह का जलवा है। फैजाबाद में अभय सिंह का दबदबा है। जौनपुर में धनंजय सिंह की धाक है। रायबरेली में अखिलेश सिंह का रुतबा है तो प्रतापगढ़ राजा भैया के नाम से जाना जाता है। इलाहाबाद में अतीक अहमद और भदोही मिर्जापुर में उदयभान सिंह की चलती हैं।

मुन्ना बजरंगी ने अन्नू त्रिपाठी को वाराणसी में रंगदारी वसूली की फ्रेंचायज़ी दी थी। यह अपराध के व्यवसायीकरण का एक उदाहरण है।

और त्रिभुवन सिंह कमजोर पड़ते गये और मुख्तार अंसारी के पांव लगातार मजबूत होते गये।

मुख्तार अंसारी के बारे में मशहूर है कि किसी भी स्थान पर जाने से पहले अपने करीबियों को भी जानकारी नहीं देते और काफिले में पांच या दस किलोमीटर चलने के बाद अपनी गाड़ी बदल लेते हैं। काफिले की गाड़ियों में मोबाइल का नेटवर्क आपस में जुड़ा रहता है। किसी भी स्थान पर गाड़ी मुड़ने से पहले साथी चौकन्ने हो जाते हैं। साथ ही मुख्तार अंसारी की बिहार के बाहुबली शहाबुद्दीन, इलाहाबाद के अतीक अहमद, रिजवान जहीर सहित करीब एक दर्जन राजनीतिज्ञों की घनिष्ठता चर्चा का विषय बनी रहती है। 6 फुट 3 इंच लम्बे इस बाहुबली के खिलाफ दिल्ली, वाराणसी, गाजीपुर, लखनऊ में हत्या, अपहरण समेत कई गंभीर मामले दर्ज हैं। कहा जाता है कि बाद में मुख्तार अंसारी इसलिए भी ज्यादा मजबूत मजबूत होता गया क्योंकि उसे माफिया सरगना मुन्ना बजरंगी का साथ मिला।

अपने को मज़बूत रखने के लिए मुख्तार अंसारी ने मुन्ना बजरंगी को अपना वरदहस्त दिया। यही वजह थी कि धीरे–धीरे छोटे–छोटे अपराध करने वाला 'मुन्ना' बड़ा माफिया डॉन बन बैठा। मुन्ना बजरंगी की कहानी भी अपराधों से पटी पड़ी है। मुन्ना बजरंगी पन्द्रह साल की उम्र से ही जरायम की राह पर चल पड़ा। जौनपुर में निजी बस के परिचालक से अपने जीवन का सफर करने वाला प्रेमप्रकाश सिंह उर्फ मुन्ना बजरंगी सबसे पहले वाराणसी के दबंग अनिल सिंह के संपर्क में आया। इस आपराधिक सफर में वह गांव के टपोरी से इंटरस्टेट गैंग नम्बर 233 से सरगना बन गया। सुर्खियों में आने के बाद उसके आपराधिक जीवन के किस्से छनकर बाहर आने लगे। यह बात भी सही है कि मुन्ना बजरंगी किस्मत का बहुत धनी है। जब भी वह किसी पर हमला करता है जो ज्यादातर वह सफल रहता है और दुश्मनों को ठिकाने लगाने में कामयाब रहता है। जब उस पर हमले की कोशिश होती है या फिर पुलिस का शिकंजा कसता है तो वह बचने में कामयाब रहता है। यह बात लोग अच्छी तरह से जानते हैं कि कई बार पुलिस और मौत दोनों उसके करीब पहुंची, लेकिन हर बार वह उनसे बचकर निकलने में कामयाब रहा।

पूर्वांचल का दर्द है कि अब यहां हर समस्या का निदान बंदूक की गोलियों से निकाला जाता है। कभी भी किसी मुद्दे पर शोले बरस सकते हैं, बंदूकें आग उगल सकती हैं।

पुलिस सूत्रों और अखबार में छपी खबरों की मानें तो 12 नवम्बर 2005 को चंदवक थाना पुलिस को सूचना मिली कि कुख्यात अपराधी जौनपुर की तरफ जा रहे हैं। पुलिस ने उस मार्ग पर वाहनों की जांच–पड़ताल शुरू कर दी। यहां से गुजरने वाले हर संदिग्ध व्यक्ति को चेक किया जा रहा था। इसी दौरान जौनपुर के जेसीज़ चौराहे पर पुलिस के एक जवान ने एक संदिग्ध व्यक्ति को रोक कर पूछताछ की। पूछताछ में कुछ खास न निकलने पर उसे छोड़ दिया। कहा जाता है कि जिसे छोड़ दिया गया, वह मुन्ना बजरंगी था। इसी तरह 11 सितम्बर 1998 को गाजियाबाद के इंदिरापुरम् में मुठभेड़ में एसटीएफ ने मुन्ना बजरंगी और उसके साथी को गोलियों से छलनी कर दिया था। उसका साथी यतीन्द्र तो मारा गया, लेकिन वह मौत के मुंह से बाहर आ गया। एस.टी.एफ. तो यह मानकर चल रही थी कि उसने एक अपराधी का अंत कर दिया लेकिन जिस मुन्ना बजरंगी को एस.टी.एफ. मरा समझ रही थी, बाद में पता चला कि वह जिंदा है। जाहिर है एस.टी.एफ. को उसे गिरफ्तारी में लेना पड़ा। उस समय उस पर दस हजार रुपये का इनाम था। इससे पहले की घटनाओं को देखें तो 24 जनवरी 1996 को जौनपुर में रामपुर थाना क्षेत्र के जमालापुर तिराहे पर पूर्वांचल में ए.के.–47 गरजी थी तो क्षेत्र प्रमुख कैलाश दुबे, टीडी कालेज के छात्रनेता राजकुमार सिंह और अमीन बांके लाल तिवारी छलनी हुए थे। इस मामले में मुन्ना बजरंगी को जौनपुर की अदालत में पेश किया गया। गिरफ्तार मुन्ना बजरंगी को 28 मई 2001 को जमानत मिली, लेकिन जमानत पर छूटने के बाद वह फिर फरार हो गया।

जमानत पर रिहा होने के बाद से पुलिस का उस तक पहुंचना आसान नही रहा। उसके अपराधों का ग्राफ लगातार ऊपर चढ़ता रहा। फिर वह उन लोगों पर भी हावी हो गया, जो कभी उसके संरक्षणदाता थे और जिन्होंने उसका अण्डरवर्ल्ड से रिश्ता कायम कराया था। पुलिस की पकड़ से बाहर होने का ही नतीजा था, उस पर एक बार फिर पुरस्कार घोषित करने का सिलसिला शुरू हुआ। पहले ढाई हजार और फिर डीआईजी स्तर पर दस हजार का पुरस्कार घोषित होने के बाद पुरस्कार राशि बढ़ाने का प्रस्ताव शासन को भेज दिया गया। इसके बाद शासन ने पुरस्कार राशि बढ़ाकर बीस हजार कर दी। फिर यह पुरस्कार राशि बढ़ाकर एक लाख कर दी गयी। पुलिस ने मुन्ना बजरंगी की फोटो भी जारी की। लेकिन इस बात को सबने माना कि पुलिस द्वारा जारी फोटो की

तुलना में मुन्ना बजरंगी का हुलिया भी काफी बदल गया होगा क्योंकि फोटो लगभग 12 साल पुरानी थी। समय के साथ–साथ किसी भी व्यक्ति के चेहरे में परिवर्तन लाज़मी है। आमतौर पर एजिंग फैक्टर के चलते आदमी के चेहरे और शरीर में समय के साथ–साथ काफी परिवर्तन आ जाते है। वाराणसी में नगर निगम के एक पूर्व पदाधिकारी द्वारा पुलिस को उपलब्ध करायी गयी वह फोटो उस समय की थी, जब बारह साल पहले मुन्ना बजरंगी विन्ध्यांचल में दर्शन करने गया था।

प्रेमप्रकाश सिंह उर्फ मुन्ना बजरंगी का जन्म सन् 1966 में हुआ था। इसकी पढ़ाई गांव के ही प्राथमिक विद्यालय में हुई थी। कक्षा पांच पास करने के बाद उसने स्कूल की तरफ पलटकर कभी नहीं देखा। मुन्ना बजरंगी की आपराधिक गतिविधियों पर गौर करें तो पहली जनवरी 1982 को जौनपुर जिले के सुरेरी थाने में उसके खिलाफ पहला मुकदमा दर्ज किया गया है। तब उसकी उम्र महज 15 साल थी। इस मुकदमे के सिर्फ 10 दिन बाद उसने सुरेरी थाना क्षेत्र में ही एक लूट कर दी। फिर वह क्षेत्र के टपोरियों के साथ मिलकर अपराध करने लगा। इस अवधि तक पुलिस डायरी में उसकी पहचान शातिर लूटेरे के तौर पर दर्ज हो चुकी थी। सुरेरी थाना क्षेत्र के पूरे दयाल (कसेरू) के स्वर्गीय पारसनाथ सिंह का मंझला बेटा मुन्ना बहुत जल्दी अपने थाना क्षेत्र का मजरिया हिस्ट्रीशीटर नम्बर एक हो गया। इसके बाद वह बड़े अपराधियों के सम्पर्क में आया और लगातार बड़ी वारदात करने लगा।

वर्ष 1995 में वाराणसी के कैंट थाना इलाके में मुन्ना बजरंगी ने दो लोगों की हत्या कर दी। इस अपराध तक बजरंगी गैंगवार में पार्टी बन चुका था और अपनी राह में आने वाले लोगों का निशाना बनाने लगा था। 27 सितम्बर 1984 को मुन्ना बजरंगी ने रामपुर बाजार में एक व्यापारी की गोली मारकर हत्या कर 90 हजार रुपया लूट लिया था। कहा जाता है कि पहली हत्या करने के बाद मुन्ना बजरंगी ने अपना कसेरू गांव छोड़ दिया। घर पर पुलिस की दबिश और परिजन का दबाव भी उसका अपराध जगत से नाता नहीं तोड़ सका। कई घटनाओं को अंजाम देने के बाद वह कई सफेदपोश नेताओं के सम्पर्क में आ गया। कई सांसद और विधायकों का नाम उसके सरपरस्तों में जुड़ने लगा।

जौनपुर में जिला कारागार के सामने वर्ष 1993 में पहली बार ए.के. सैंतालिस

हरिशंकर तिवारी और वीरेन्द्र प्रताप शाही के बीच छिड़ी जंग को हमेशा ठाकुर और ब्राह्मणों के वर्चस्व की लड़ाई के रूप में देखा गया।

राइफल की गूंज सुनाई दी। इस कांड में जिला जेल में किसी से मिलकर निकल रहे भाजपा नेता राजकुमार सिंह और उसका सरकारी अंगरक्षक मारा गया। हत्यारे अंगरक्षक के स्टेनगन लेकर फरार हो गये। इस घटना में मुन्ना बजरंगी का नाम चर्चा में आया। इसके बाद 24 जनवरी 1996 को जौनपुर में एक बड़ी वारदात को अंजाम देकर मुन्ना बजरंगी ने सनसनी फैला दी। ए.के.–47 के इस हमले में 3 मरे और 5 घायल हुए। इस घटना के एक साल बाद मुंबई से घर आये एक व्यक्ति को वर्ष 1997 में रामपुर थाना क्षेत्र में मौत के घाट उतार दिया गया। इस हत्याकांड में भी मुन्ना के अंजाम देने चर्चा रही।

इस बीच मुन्ना का सम्बन्ध मुंबई के अण्डरवर्ल्ड से हो गया। साथ ही वहां मुन्ना बजरंगी की पकड़ काफी मजबूत हो गयी। देश के कई भागों में उसका गिरोह काम करने लगा। मुन्ना बजरंगी कई प्रदेशों में घटनाओं को अंजाम देने लगा। अपराध जगत में उसका सिक्का चलने लगा। हरियाणा, गुजरात, दिल्ली, मुंबई, मध्य प्रदेश में मुन्ना का दबदबा कायम हो गया। कई बड़े नेता भी उसके सम्पर्क में रहने लगे। इसके साथ ही बस कंडक्टर मुन्ना बजरंगी बड़े माफिया सरगना के रूप में स्थापित हो गया। कहा जाता है कि उसके गिरोह के सदस्य मुन्ना बजरंगी पर काफी विश्वास भी करते हैं। इसकी वजह यह है कि मुन्ना बजरंगी अपने गिरोह के लिए मर मिटता है। जब कभी उसके किसी खास को कोई परेशानी हुई तो बजरंगी ने उसे तत्काल दूर किया। रंगदारी टैक्स की निर्बाध वसूली के लिए सनसनीखेज घटना को अंजाम देना उसकी शैली रही। अपराध की दुनिया पर नजर रखने वाले यह भी अच्छी तरह से जानते हैं कि विधायक कृष्णानंद राय से उसकी कोई सीधी दुश्मनी नहीं थी, लेकिन उसने अपने बाहुबली आका से दोस्ती निभाने के लिए ही दिल दहला देने वाली वारदात को अंजाम दिया।

अन्नू त्रिपाठी की हत्या में जिस संतोष गुप्ता का नाम आया, बताया जाता है कि वह पहले अन्नू त्रिपाठी का ही शिष्य था।

प्रेमप्रकाश उर्फ मुन्ना बजरंगी के बारे में कहा जाता है कि उसने अपने गुरु वाराणसी के तत्कालीन डिप्टी मेयर अनिल सिंह के चलते 1994 में बृजेश सिंह के करीबी छोटे सिंह व बड़े सिंह को उस समय ए.के.–47 की गोलियों से भून दिया था, जब वे वाराणसी में कार से खजुरी होकर डी.एल.डब्ल्यू. जा रहे थे। यह भी कहा जाता है कि मुख्तार अंसारी और अनिल सिंह की दोस्ती के चलते ही उसने वाराणसी में चेतगंज

थाने के सामने विधायक अजय राय के भाई अवधेश राय को गोलियों से भून दिया था। फिर अपने गिरोह के खास कृपा चौधरी के लिए उसने मडुआडीह में एके–47 से गोलियां चलाकर दो लोगों की हत्या कर दी। दोस्ती निभाने के लिए ही उसने अभिषेक उर्फ मोनू के दुश्मन बने काशी विद्यापीठ छात्रसंघ के अध्यक्ष सुनील राय समेत तीन लोगों की वाराणसी के नरिया चौराहे पर गोली मारकर हत्या कर दी।

गोलू अपहरण कांड में पुलिस ने कृष्णानन्द राय के घर की तलाशी ली थी। भूमिहार होने के कारण उत्तर प्रदेश में रणवीर सेना का मुखिया होने का आरोप उन पर लगता रहा।

इस घटना के बाद वाराणसी के दशाश्वमेघ क्षेत्र में साहू हत्याकाण्ड तथा चेतगंज में सर्राफा व्यवसायी लक्ष्मण सेठ की हत्या को अंजाम दिलाया। यह दोनों हत्याएं प्रापर्टी हासिल करने के लिए हुईं। मुन्ना बजरंगी ने कुछ दिनों तक मुंबई और राजस्थान में समय व्यतीत किया। इस बीच अफवाह उड़ गयी कि मुन्ना बजरंगी को लकवा मार गया है लेकिन जौनपुर और गाजीपुर में अपनी मौजूदगी से उसने पुलिस को चौंका दिया। लोग यह मानते है कि उसने मुख्तार अंसारी के साथ दोस्ती निभाने के लिए ही भाजपा विधायक कृष्णानंद राय की हत्या की थी। हालांकि कृष्णानन्द हत्या के पीछे एक चर्चा यह भी थी कि पुलिस के दबाव और प्रतिद्वंद्वी गिरोह के मजबूत होने के कारण उसकी हनक कमजोर पड़ गयी थी, इस धारणा को खत्म करने के लिए ही उसने कृष्णानंद की हत्या करना स्वीकार किया।

अखबारों ने पुलिस सूत्रों के हवाले से लिखा है कि शार्पशूटर मुन्ना बजरंगी की पत्नी उसके अपराधों की जानकार है। मुन्ना बजरंगी की यह पत्नी सुल्तानपुर जिले के जगदीशपुर क्षेत्र के एक शातिर अपराधी की बहन है। यह मुन्ना बजरंगी की दूसरी पत्नी है। दरअसल जब मुन्ना बजरंगी की जरायम की दुनिया में तूती बोलने लगी और वह आर्थिक रूप से समृद्ध हो गया तो उसने कई अपराधियों की मदद की। इसी दौरान सुल्तानपुर जिले के जगदीशपुर थाना क्षेत्र के रानीपुर निवासी एक शातिर अपराधी से उसका सम्बंध हो गया और बजरंगी ने उसकी बहन से शादी भी कर ली। इसके पहले मुन्ना बजरंगी की शादी चंदौली के मुगलसराय थाना क्षेत्र के हिखारी गांव में हुई थी। मुन्ना ने शादी के कुछ समय बाद ही अपनी पहली पत्नी को छोड़ दिया। कहा जाता है कि बाद में मुन्ना बजरंगी के भाई ने उसे अपना लिया।

बजरंगी का ही एक साथी था फिरदौस, जो कृष्णानन्द राय की हत्या में भी शामिल था। फिरदौस पर 50 हजार रुपये का इनाम था। विधायक की हत्या के बाद से ही एसटीएफ उसे जोरशोर से तलाश कर रही थी और अन्ततः वह हत्थे चढ़ ही गया। फिरदौस उर्फ मुहम्मद जावेद उर्फ चांदा को 19 अप्रैल 2006 की दोपहर को मुम्बई पुलिस और उत्तर प्रदेश की एसटीएफ ने मलाड थाना इलाके जोगेश्वरी में ढेर कर दिया। राजनीति के अपराधीकरण का स्तर कितना आगे जा चुका है, इसका प्रत्यक्ष प्रमाण था ये बदमाश। लखनऊ–इलाहाबाद राजमार्ग पर ऊंचाहार से पांच किलोमीटर दूर स्थित गांव का मूल निवासी फिरदौस 1990 से अपराध की दुनिया में सक्रिय था। स्थानीय स्तर पर तो उसके खिलाफ छिटपुट अपराध दर्ज हुए। इसमें ऊंचाहार में दो मामूली मामले, मुठभेड़ व कट्टा बरामदगी से जुड़े थे। फुरसतगंज में एक हत्या का मामला दर्ज था। वास्तव में बड़े अपराध के लिए उसने अपने गृह जनपद से बाहर का रास्ता तय किया। जहां उसे बड़े अपराधियों व राजनीतिज्ञों का संरक्षण मिला। रायबरेली पुलिस ने एक बार जब उसे स्टेशन से गिरफ्तार किया तो एक विधायक के संरक्षण की बात सामने आयी थी, परन्तु इसे गंभीरता से नहीं लिया गया। इसका ही परिणाम था कि उसके आपराधिक कदम बढ़ते गये और वह बड़े शहरों की ओर मुख़ातिब हो गया।

वाराणसी के एक अखबार ने लिखा कि रायबरेली का शूटर फिरदौस कृष्णानन्द की हत्या से कुछ महीने पहले एक सपा नेता की गाड़ी में घूमता था। इसे फैजाबाद के एक माफ़िया ने सपा नेता के साथ लगा दिया था। रायबरेली और सुल्तानपुर में चेन स्नेचिंग करने वाला फिरदौस इसी माफिया के साथ रहते–रहते शूटर हो गया। अपनी बिरादरी का शूटर पाकर सपा नेता खुद को गौरान्वित महसूस करने लगा था। इसका आपराधिक इतिहास रायबरेली से लेकर लखनऊ तक रहा है। सपा नेता इस शूटर को उस समय वाराणसी लाये, जब जेल में अन्नू त्रिपाठी की हत्या हुई। इसका प्रयोग बाला हत्याकांड में किया जाना था लेकिन चोलापुर के एक बदमाश ने उसे साथ रखने से इनकार कर दिया था।

मुन्ना के संपर्क में आने से पहले लम्बे समय तक फिरदौस का कानपुर ठिकाना रहा। वह लूट–हत्या जैसी संगीन वारदातों में वह आरोपित था। फिरदौस पर कानपुर में छह मुकदमें दर्ज हैं, जिनमें एक बैंक डकैती भी शामिल है। फिरदौस पहले लखनऊ के बाबू खां गिरोह में था। इस गिरोह के सदस्य रहते हुए फिरदौस ने लखनऊ में लूट की छह

वीरेन्द्र प्रताप शाही की हत्या ही वह वारदात थी जब लखनऊ में पहली बार ए.के.–47 रायफल गरजी थी।

वारदातें कीं, जिसमें कृष्णानगर में बैंक डकैती भी शामिल थी। फिरदौस वारदात कर लखनऊ से तुरन्त कूच कर जाता था। फिरदौस के ख़िलाफ कुल 19 से ज़्यादा आपराधिक मामले दर्ज थे। बाबू खां के बाद ही फिरदौस पूर्वांचल के एक विधायक के मार्फत मुन्ना बजरंगी के संपर्क में आया था।

भले ही किसी माफिया का इतिहास अपहरण, फिरौती, रंगदारी और खूनी खेल से भरा रहा हो लेकिन राजनीति में उनके लिए अब जगह है। वो चुनाव लड़ सकते हैं, जीत सकते हैं और मंत्री भी बन सकते है।

इसी तरह कृष्णानंद राय की हत्या में शामिल चर्चित शूटर संजीव जीवा भी शातिर अपराधी है। उसके ठिकाने पंजाब, हरियाणा और राजस्थान सहित कई राज्यों में रहे हैं। हरिद्वार से लेकर जयपुर तक में उसकी विवादित संपत्तियां बताई जाती हैं। पुलिस के लंबे हाथों से दूर बने रहने के लिए ही उसने मुजफ्फरनगर से लेकर फतेहगढ़ तक के अपराधियों को हमराह बनाया। कहा जाता है कि जीवा जितना जिद्दी है, उतना ही घुटा हुआ भी है। कृष्णानंद राय हत्याकांड को अंजाम देने से पहले वह गुमनामी के अंधेरे में खो जाना चाहता था। इसी साजिश के तहत उसने हत्याकांड से करीब चार महीने पहले अपनी मौत की अफवाह भी उड़वायी, लेकिन कामयाब नहीं हो सका। एसटीएफ को उसकी संदिग्ध गतिविधियां पहले ही मालूम पड़ रही थीं। इसके बावजूद उसने कृष्णानंद राय हत्याकांड को अंजाम दिया। कृष्णानंद की हत्या से करीब आठ महीने पहले तक वह फतेहगढ़ जेल में बंद रहा और जब तक पूर्वांचल में सुरक्षित ठिकाना नहीं मिला, जेल से बाहर नहीं आया। उसे मालूम था कि अगर पुलिस के हत्थे चढ़ गया तो जिन्दा बच पाना मुश्किल है। अपनी जान पर खतरा मंडराता देखकर ही उसने माफिया सरगना के यहां शरण ली। वरना उसका नेटवर्क मुंबई तक फैला हुआ था। कृष्णानंद राय हत्याकांड में उसका नाम आ जाने के बाद एसटीएफ और पुलिस उसकी सरगर्मी से तलाश में लगी। लेकिन सफलता दिल्ली पुलिस की स्पेशल सेल के हाथ लगी। 14 अप्रैल 2006 को दिल्ली पुलिस ने उसे गिरफ्तार कर लिया। जीवा जुर्म के सफर में अब तक दो विधायकों का खून कर चुका है।

इसी तरह विधायक कृष्णानंद राय की हत्या में आरोपित अताउररहमान उर्फ बाबू पर रूंगटा अपहरण में गिरफ्तारी के लिए दो लाख का इनाम घोषित किया गया है। वह

वर्षों से फरार रहा और बिहार के सीवान में शरण लेने की खुफिया जानकारी मिली। इसके बारे में जानकारी मिली है कि ये लगातार गाजीपुर आता–जाता रहा है। इनके गिरोह की पुलिस प्रशासन पर भी अच्छी खासी पकड़ रही है। इसी प्रभाव के चलते इस गिरोह ने पुलिस रिकार्ड में रूंगटा अपहरणकांड के अताउर्रहमान उर्फ बाबू व शहाबुद्दीन को फरार घोषित कराया। इसके बाद सीबीआई कार्यालय दिल्ली से अताउर्रहमान और शहाबुद्दीन फरार दर्ज हुए। रिकार्ड में आया कि अताउर्रहमान पाकिस्तान और शहाबुद्दीन बांग्लादेश में हैं। यह अखबार भी लिख चुके हैं कि बाबू मियां, मुख्तार अंसारी के खास लोगों में है और उनके रिश्तेदार भी। उस पर आठ मुकदमें दर्ज हैं।

जाहिर सी बात है जो लोग अपराध की इबारत लिख रहे हैं, उन्हें अब राजनीति का हुनर भी आ गया है। उन्हें अगर अपने आपराधिक गिरोह का विस्तार करना आता है तो ये भी पता है कि किस तरह राजनीतिक मुकाम हासिल किया जा सकता है। ये बात अब हर खासोआम जान चुका है कि असलहों और शराब का प्रयोग अपराध की दुनिया में ही नही होता, बल्कि इसका दुरूपयोग वोट पड़वाने और चुनाव जीतने के लिए भी होता है। उन्हें पता है कि किस तरह मजबूर मतदाताओं का वोट ताकत के बल पर हासिल किया जा सकता है। मतदाता भी जानते हैं कि ई.वी.एम. मशीन पर बाहुबली के नाम का बटन न दबाने का हश्र क्या होगा।

सवाल ये उठता है कि उत्तर प्रदेश की राजनीति में अपराधियों के प्रश्रय का दौर कब से शुरू हुआ? इंडिया टुडे ने अपने 1 नवम्बर 2004 के अंक में लिखा है कि 70 के दशक के अंतिम सालों में कांग्रेस जैसे सबसे पुराने राजनीतिक दल ने बाहुबालियों को प्रश्रय देना शुरू किया। वो दौर इंदिरा गांधी के बेटे संजय गांधी का था। सत्तर के उस दशक में संजय गांधी बाहुबालियों और उनके गुर्गों में घिरे रहते थे। रायबरेली से लेकर राज्यस्तर तक वो अपने चारों तरफ मंडराते हुए बाहुबलियों की इच्छाओं को पूरा करने के लिए फरमान जारी करते रहते थे। लेकिन दागियों से राजनेताओं के संबंध का नज़ारा एकदम खुला हुआ नही था। पिछले करीब 4–5 दशक की राजनीति पर नज़र डालें तो सन् 1977 के चुनाव से पहले अपराधी आपसी दुश्मनी में गोली–तमंचा चलाते थे, ठेके–पट्टे लिया करते थे मगर पुलिस के डर से चोरों की तरह मारे–मारे फिरते थे। कुछेक नेता ही उन्हें संरक्षण दिया देते थे, मगर वे भी इस बात को लेकर सतर्क रहते थे कि उनके चहेते अपराधी को कोई उनके साथ सार्वजनिक रूप से न देख ले। नेता

यह सच्चाई है कि पुलिस ने कभी जानबूझकर और कभी मजबूरी में उनकी मदद की, जिन्होंने हथियार उठाया।

उत्तर प्रदेश में माफिया सरगना श्रीप्रकाश शुक्ला को निपटाने के लिए ही स्पेशल टास्क फोर्स का गठन किया गया था।

और अपराधी का रिश्ता अवैध संबंध की तरह था, जिसे सात पर्दे के पीछे रखा जाता था। 1977 के चुनाव में ही राजनीति का अपराधीकरण परवान चढ़ा। उस समय आपातकाल के कारण कांग्रेस की साख बुरी तरह से गिर गयी थी। उधर, जनता पार्टी के तत्कालीन कद्दावर नेताओं ने चुनाव में टिकट वितरण के समय जाने–अनजाने आपराधिक पृष्ठभूमि वाले लोगों को भी टिकट दे दिया। कांग्रेस विरोधी लहर में ये अपराधी भी निर्वाचित हो गये। उनकी विजय ने अपराधियों को विधायक, सांसद और मंत्री बनने की राह दिखा दी। साल दर साल अपराधियों के पंख बड़े होते गये। बाहुबलियों की उड़ान दिन पर दिन परवान चढ़ती गयी। उत्तर प्रदेश के लिहाज से ये कड़वी सच्चाई है कि बाहुबलियों की भुजाएं उत्तर प्रदेश विधानसभा के हर नये सदन में पहले से ज्यादा मजबूत नजर आयी। 1984 का उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनाव का परिणाम इसकी सच्चाई बयां करता है। 1984 में विधानसभा के सदन में 35 विधायक ऐसे थे, जिनके खिलाफ आपराधिक मामले दर्ज थे। खास बात ये थी कि इनमें से 18 विधायक कांग्रेस के खाते में दर्ज थे। इसी साल गोरखपुर के बाहुबली हरिशंकर तिवारी की राजनीति में इंट्री हुई। हरिशंकर तिवारी ने न केवल चुनाव लड़ा बल्कि चुनाव जीता भी। खास बात ये थी कि हरिशंकर तिवारी ने ये चुनाव जेल में रहते हुए लड़ा था।

राजनीति में अपने पर्दापण से लेकर आज तक हरिशंकर तिवारी की हनक कायम है। वह बाहुबल के सहारे राजनीति में दखल देने वाले राजनीतिज्ञों के इतिहास में 'सुनहरे अक्षरों' में दर्ज हो गये हैं। हरिशंकर तिवारी के खिलाफ 30 से ज्यादा मामले दर्ज हुए। कांग्रेस, जो देश की आजादी के समय से लेकर आज तक कानून व्यवस्था को बेहतर बनाने की बात कहती है, उसी ने बाद में हरिशंकर तिवारी के लिए अपनी पार्टी के दरवाजे खोले। आज के दौर की राजनीति के पाला बदल के खेल में भी तिवारी माहिर रहे हैं। सत्ता में बने रहने के गुणा–गणित भी उन्हें बेहतर तरीके से आता है। कई सरकारों में उन्होंने मंत्री पद हासिल किया। चाहे कल्याण सिंह, रामप्रकाश गुप्त की सरकार रही हो या फिर राजनाथ सिंह की, चाहे मायावती की सरकार रही हो या फिर मुलायम सिंह यादव की, सबने अपने मंत्रिमंडल में एक ताज हरिशंकर तिवारी को भी पहनाया।

प्रदेश में जबसे बाहुबलियों की दखल बढ़ी तो बढ़ती ही चली गयी। 1988 में

इलाहाबाद के उपचुनाव की बात करें तो कहा जाता है कि उस समय के मुख्यमंत्री वीरबहादुर सिंह ने अपने प्रत्याशी के प्रचार के लिए एक हिस्ट्रीशीटर भुक्खल महाराज को जेल से जमानत पर छुड़वा लिया। ये एक हकीकत ही है कि जब किसी भी तरीके से चुनाव जीतना जरूरी था तो कांग्रेस ने बाहुबलियों की मदद लेने से किसी तरह की परहेज नहीं किया। 1989 आते–आते राजनीतिक दलों ने नैतिकता ताक पर रख दी। अब नेताओं को ऐसा लगने लगा कि केवल धन की बदौलत सत्ता पर काबिज नहीं हुआ जा सकता। उन्हें बाहुबल की जरूरत महसूस होने लगी। बाहुबलियों को अपने दल में शामिल करने पर राजनीतिक दलों को शर्म–संकोच महसूस नहीं हो रही थी। अपहर्ताओं, तस्करों और हत्यारों के राजनेता बनने के साथ–साथ नैतिकता की बची–खुची दीवार भी गिरती गयी। जिन अपराधियों को सलाखों के पीछे दिखना था, वो राजनीतिक दलों में नजर आने लगे।

1989 के विधानसभा चुनावों में दागी विधायकों की संख्या ने अपना अर्द्धशतक पूरा कर लिया। जहां एकतरफ विधानसभा में बाहुबलियों की संख्या बढ़ती गयी, वहीं राजनीति में अस्थिरता का दौर भी बढ़ता गया। ये अस्थिरता दागियों के लिए मुनाफे की राजनीति बन गयी। बहुमत हासिल करने के लिए पार्टियों को उनकी दरकार महसूस हुई। जबकि सत्ता पक्ष में रहना दागियों की 'मोडस ऑपरेंडी' का हिस्सा नज़र आने लगा। इन दागियों को अच्छी तरह से पता था कि सत्ता की हनक से ही इनकी हैसियत बढ़ सकती है और भविष्य उज्ज्वल हो सकता है। जाहिर है राजनीतिक दलों के लिए बाहुबली विधायकों के बगैर सरकार बनाना कठिन काम हो गया था। 1991 के विधानसभा चुनाव में उन 133 विधायकों ने फतेह की, जिनके खिलाफ आपराधिक मामले दर्ज थे। खास बात ये थी कि इन विधायकों में चाल, चरित्र और चेहरे की बात करनेवाली भारतीय जनता पार्टी के खाते में सबसे ज्यादा 40 बाहुबली विधायक दर्ज थे। भारतीय जनता पार्टी बात तो राम की कर रही थे लेकिन उसने 'रावणों' के साथ सरकार बनाने में शर्म महसूस नहीं की। 1991 के इस दौर में अन्य दल भी सफेद चादर लेकर नहीं चल रहे थे। जनता दल में 34, समाजवादी पार्टी में 26, कांग्रेस में 19 और बहुजन समाज पार्टी में 7 विधायक ऐसे थे, जिनका आपराधिक इतिहास था। अपराधियों की दखल 1993 और 1996 विधानसभा चुनावों में कम नहीं हुई बल्कि बढ़ी। 1993 की उत्तर प्रदेश विधानसभा में 148 दागी थे तो 1996 के विधानसभा चुनावों में ऐसे 152 प्रत्याशियों ने जीत दर्ज की थी।

तत्कालीन मुख्यमंत्री कल्याण सिंह की हत्या की सुपारी लेने की खबर आने के बाद श्रीप्रकाश शुक्ला की शामत आयी और एस.टी.एफ. ने उसे मुठभेड़ में मार गिराया।

वो दौर परवान पर चढ़ चुका था, जिसमें अपराधियों की बदौलत सरकार बनाये रखना शर्म का विषय नहीं था। 1997 में मायावती ने कल्याण सिंह सरकार से समर्थन वापस लेकर सत्ता पर संकट खड़ा कर दिया। लेकिन कल्याण सिंह अपनी सरकार बचाने में कामयाब रहे। उन्होंने 38 विधायकों का समर्थन जुटा लिया। इसमें से 18 विधायकों के खिलाफ आपराधिक मामले दर्ज थे। हरिशंकर तिवारी ने भी मंत्री के रूप में शपथ ली, उस समय उनके खिलाफ 20 से ज्यादा अपराधिक मामले चल रहे थे। उसमें 9 हत्या, 10 हत्या के प्रयास व डकैती और अपहरण के तीन–तीन मामले थे। इन माननीय मंत्रियों की सूची में बच्चा पाठक, आठ मामलों में आरोपी मंडलेश्वर सिंह भी थे। इसी तरह से दंगा, डकैती और अपहरण के आरोपी श्याम सुंदर शर्मा और बाहुबली रघुराज प्रताप सिंह भी मंत्रिमंडल की शोभा बढ़ा रहे थे।

यह दुर्भाग्य है कि पिछले कुछ दशकों से गोरखपुर बाहुबलियों और शूटरों की वजह से ज्यादा चर्चित रहा है। इसी बदनामी के चलते बीबीसी गोरखपुर को 'मिनी शिकागो' के नाम से नवाज़ चुका है।

2002 की विधानसभा में 207 विधायकों की खादी पर अपराध के धब्बे नज़र आये। 2002 की विधानसभा में आधे से अधिक विधायक पुलिस फाइलों में हिस्ट्रीशीटर, माफिया सरगना, तस्कर, हत्यारे और अपहर्ता के तौर पर दर्ज थे, इसमें कोई शक नही है। इनमें किसी भी राजनीतिक दल का दामन पाक नहीं कहा जा सकता। 2002 की विधानसभा में समाजवादी पार्टी के 84 विधायक दागी नजर आये। 54 विधायकों ने बहुजन समाज पार्टी को दाग लगाया तो भारतीय जनता पार्टी ने 2002 की विधानसभा के सदन में 41 आपराधिक इतिहासवाले विधायक दर्ज किये। कांग्रेस और राष्ट्रीय लोकदल ने सदन में 7–7 दागियों को अपने खाते में दर्ज कराया।

लोग यह जानते हैं कि अगर मऊ, गाजीपुर, वाराणसी में मुख्तार अंसारी का वर्चस्व है तो गोरखपुर में हरिशंकर तिवारी की तूती बोलती हैं। गोण्डा, बलरामपुर में बाहुबली बृजभूषण शरण सिंह का दबदबा है। फैजाबाद में अभय सिंह का जलवा है। जौनपुर में लोग धनंजय सिंह को सलाम करते हैं। बाराबंकी में मादक पदार्थों के तस्करों का वर्चस्व

है। रायबरेली में अखिलेश सिंह का रुतबा है तो प्रतापगढ़ रघुराज प्रताप सिंह 'राजा भैया' के नाम से पहचाना जाने लगा है। इलाहाबाद में अतीक अहमद और भदोही–मिर्जापुर इलाके में उदयभान सिंह के जौहर का लोहा लोग मानते हैं। पूर्वांचल में दो भाइयों रमाकांत यादव और उमाकांत यादव की भी चलती है। रमाकांत यादव बाहुबली ही नही है बल्कि राजनीति के भी बड़े खिलाड़ी हैं। रमाकांत यादव 1986 से 1995 के बीच समाजवादी पार्टी के टिकट पर उत्तर प्रदेश विधानसभा के 4 बार विधायक बने। 1996 में पहली बार संसद में पहुंचे, फिर 1999 में संसद पहुंचे और बहुजन समाज पार्टी के टिकट पर 2004 की संसद में भी आजमगढ़ से प्रवेश लिया। बताना जरूरी है कि रमाकांत यादव पर अपहरण और फिरौती सहित 17 मामले अब तक दर्ज हो चुके है। रासुका भी लग चुका है। इनके छोटे भाई और 2004 में मछलीशहर से सांसद चुने गये उमाकांत यादव भी बड़े भाई के पदचिह्नों पर चलते हैं। इनके खिलाफ करीब 29 मुकदमे दर्ज हुए।

2004 के लोकसभा चुनाव में उत्तर प्रदेश की सीटों पर राजनीतिक दलों की हकीकत जाहिर हो गयी। प्रमुख राजनीति दलों ने दागियों को टिकट देने में परहेज नही किया। इस चुनाव में दलितों की पार्टी बसपा ने सबसे ज्यादा 10 दागदार दामनवाले प्रत्याशियों को मैदान में उतारा। लोकसभा के इस चुनाव में सपा के चार और भाजपा के तीन ऐसे प्रत्याशी थे, जिनके खिलाफ आपराधिक मामले दर्ज थे। अपना दल ने अंतरराष्ट्रीय माफिया बबलू श्रीवास्तव को टिकट देकर अनोखी नजीर पेश की। कहीं मित्रसेन यादव लड़ रहे थे तो कहीं रिज़वान ज़हीर मुकाबले में थे। खलीलाबाद से भालचन्द्र यादव को टिकट मिला था। सपा के टिकट पर प्रतापगढ़ से अक्षय प्रताप सिंह भाग्य आजमा रहे थे तो महाराजगंज से कुवंर अखिलेश सिंह मुकाबले में थे। अतीक अहमद फूलपुर से चुनाव में उतरे तो गोण्डा से बृजभूषण शरण सिंह मुकाबले में थे। कहने की जरूरत नहीं कि जीते चाहे हारे लेकिन अब ये लोग राजनेता हैं।

कवयित्री मधुमिता शुक्ला की हत्या से सुर्खियों में आये बाहुबली नेता अमरमणि त्रिपाठी पुलिस अधिकारी के बेटे हैं। इनके खिलाफ कई आपराधिक मामले दर्ज हो चुके हैं।

वैसे 2002 में उत्तर प्रदेश विधानसभा का चुनाव भी कम रोचक नही था। 2002 के विधानसभा चुनाव में वाराणसी और आस–पास के जिलों में लगभग 60 से अधिक उन लोगों ने चुनाव लड़ा, जिनके खिलाफ मामले दर्ज थे। इनमें से ज्यादातर किसी न किसी

जब मधुमिता शुक्ला की हत्या हुई थी तब उसके पेट में छह माह का गर्भ पल रहा था।

राजनीतिक दल का टिकट पाने में सफल रहे थे। नौगढ़ की पहाड़ियों में कभी दस्यु सरगना के रूप में आतंक का पर्याय बन रहे हरि प्रसाद उर्फ घमड़ी ने सोनभद्र की राबर्ट्सगंज विधानसभा सीट से बहुजन क्रांति दल की टिकट पर अपनी किस्मत आजमायी तो कुख्यात नागा यादव ने वाराणसी की गंगापुर सीट से चुनाव लड़ा। यह बताने की जरूरत नहीं कि नागा यादव के खिलाफ उस समय 32 संगीन मुकदमे विचाराधीन थे और यह चुनाव उसने जेल में रहते हुए लड़ा था। यह बात अलग है कि इस चुनाव में नागा यादव को सफलता नहीं मिली। इसी चुनाव में जेल में रहते हुए धनंजय सिंह ने रारी (जौनपुर) से चुनाव लड़ा और विधानसभा में पहुंचने में कामयाब रहे। संतरविदासनगर की ज्ञानपुर विधानसभा सीट से विजय कुमार मिश्र ने समाजवादी पार्टी के टिकट पर चुनाव लड़ा और जीता भी। उस समय विजय कुमार मिश्र के खिलाफ 35 मुकदमे विचाराधीन थे। इसी तरह वाराणसी की कोलअसला विधानसभा सीट से अजय राय ने जीत दर्ज की। भारतीय जनता पार्टी के अजय राय के खिलाफ उस समय आधा दर्जन मुकदमे विचाराधीन थे। डॉ. उदयभान सिंह उर्फ डॉक्टर सिंह ने जेल में रहते हुए औराई (संतरविदासनगर) से चुनाव लड़कर जीता। बाद में एक अपराधिक मामले में हाईकोर्ट के दोषी करार देने पर उनकी सदस्यता छिन गयी।

...और फिर जब माननीय मंत्रियों और विधायकों पर हत्या और अपहरण जैसे मामले दर्ज हो चुके हों तो अफीम तस्करी का आरोप लगने पर आश्चर्य नही होना चाहिए। न्यूज़ चैनल आईबीएन–सीएनएन और चैनल–7 ने अपने स्टिंग ऑपरेशन के जरिए इसे उजागर करने की कोशिश की। चैनलों ने बताया कि किस तरह से बाराबंकी के सतरिख थाने में अफीम तस्करी सहित कई मामलों में नामजद संग्राम सिंह वर्मा भाजपा के शासनकाल में मंत्री बन जाते हैं और बसपा भी उन्हें अपनी पार्टी में जगह देने से नहीं हिचकती। इसी कार्यक्रम में समाजवादी पार्टी सरकार के एक मंत्री ने स्टिंग ऑपरेशन के रिपोर्टरों को तस्करी में मदद देने का आश्वासन दिया। साथ ही एक अन्य मंत्री को अफीम तस्करी का एक्सपर्ट बताया। जब अपराध की दखल इस कदर हो तो आम आदमी क्या खुद नेताओं की जिंदगी को सुरक्षित कहना नासमझी होगी। प्रदेश की राजनीति की ये दशा निश्चित रूप से निराशाजनक है।

अब सवाल यह भी उठता है कि राजनीति के अपराधीकरण के इस दौर में माफियाओं का अगला निशाना कौन हो सकता है? यह प्रश्न लोगों में चर्चा का विषय है। इस तरह

की सूचनाएं मिल रही है और अखबारों ने भी छापा है कि कुख्यात माफिया डॉन दाऊद इब्राहिम की 'डी' कंपनी और सूबे में उसके लिए काम करनेवाले लोग पूर्वांचल के एक भाजपा सांसद को निशाना बना सकते हैं। ये भाजपा सांसद मजहब की राजनीति की एक धुरी माने जाते हैं। इस भाजपा सांसद ने ऐसी उग्रपंथी हिन्दू नेता की छवि बना ली है, जो हिन्दू हितों के लिए किसी भी हद तक जा सकता है। इसी तरह मुन्ना बजरंगी के नेपाल पहुंचने की सूचना से इनकार नहीं किया जा सकता। अपराध जगत का आकलन है कि बजरंगी सिर्फ शरण लेने के लिए वहां नहीं पहुंचा। आई.एस.आई. और 'डी' कम्पनी ने नेपाल सीमा से सटे पूर्वांचल को निशाने पर रखा है। कृष्णानंद राय की तरह एक भाजपा सांसद भी समीपवर्ती जनपद के एक बाहुबली सांसद के क्रियाकलापों का खुलकर विरोध करते हैं। यह भी वजह है कि मीडिया को ऐसा लगता है कि उनके वर्चस्व समाप्त करने की तैयारी की जा रही है।

बिहार के एक बाहुबली सांसद के 'डी' कम्पनी से संबंधों की चर्चा हमेशा सुर्खियों में रही है। मुख्तार से भी अपने नजदीकी संबंध के चलते उनका पूर्वांचल आना—जाना लगा रहता है। नेपाल की सीमा से सटा उनका क्षेत्र लम्बे समय से अपराधियों की शरणस्थली रहा है। बिहार में डेढ़ दशक तक सत्तारूढ़ दल के सांसद सत्ता परिवर्तन और सख्ती के चलते अपने लोगों के लिए सुरक्षित स्थान की तलाश में थे। नेपाल की सीमा से सटा यह क्षेत्र 'डी' कम्पनी की निगाह में था। कहा जाता है कि पूर्वनिर्धारित योजना के तहत सांसद के शूटर्स की मदद से कृष्णानंद की हत्या की गयी ओर गिरोह नेपाल के लिए कूच कर गया। वहां गिरोह को समीपवर्ती जनपद के एक बाहुबली सांसद का संरक्षण मिला। यह लोग जानते हैं कि मिर्जा दिलशाद बेग की हत्या के बाद वहां 'डी' कम्पनी कमजोर पड़ गयी थी और रही सही कसर भाजपा सांसद ने पूरी कर दी।

अबू सलेम ने उत्तर प्रदेश में खुद कोई अपराध नहीं किया लेकिन दाऊद के अवैध कारोबार की जमीन उसके इशारे पर ही तैयार हुई।

'डी' कम्पनी को हमेशा यह शक रहा है कि बेग की हत्या को अंजाम देने वाले गिरोह को भाजपा सांसद ने सहयोग दिया था। अखबारों ने लिखा है कि अपने गिरोह को फिर से प्रभावशाली बनाने के लिए भाजपा सांसद को समाप्त करने का जिम्मा मुन्ना बजरंगी को सौंपा गया है। भाजपा सांसद के बाद पूर्वांचल की राजनीति पर ढाई दशक से काबिज एक प्रभावशाली कैबिनैट मंत्री को निशाने पर लिया

जायेगा। भाजपा सांसद का कभी भी विरोध न करने वाले इस मंत्री का कद भी ऊंचा है और अपराधियों से संबंध की चर्चाएं भी रहती हैं। नेपाल से इलाहाबाद के रूट में ये दो प्रमुख लोग हैं जो 'डी' कंपनी की आंख में खटक रहे हैं।

यह स्थिति बहुत खतरनाक है। बात स्पष्ट है कि जो भी इन बाहुबलियों या माफिया सरगनाओं की राह में रोड़ा बन रहे हैं। उनका सफाया कभी भी किया जा सकता है। बाहुबली खुद को और अपने हमदर्दों को ज्यादा से ज्यादा मजबूत करने की कोशिश कर रहे हैं। साथ ही अपने राजनीतिक और अपराधिक साम्राज्य का विस्तार कर रहे हैं। उत्तर प्रदेश के माफिया तंत्र ने पुलिस प्रशासन को राह के रोड़े की तरह एक ओर खिसका कर सियासी ताकत वाले अपने—अपने मजबूत किले खड़े करने की अंतहीन और बेखौफ जंग छेड़ी हुई है। माफिया हाथ में गोला बारूद लिए विरोधी को साफ करने में जुटे हैं। इस जंग को देखते हुए तो कम से कम यही कहा जा सकता है प्रदेश का सारा प्रशासनिक तंत्र उनके सामने बेबस और लाचार खड़ा नजर आता है।

अबू सलेम ने आजमगढ़ के सरायमीर से मामूली मोटर मकैनिक का काम शुरू किया। सरायमीर से मुंबई गया तो वहां दर्जी का काम किया लेकिन इस शातिर आदमी के भाग्य में डॉन बनना लिखा था।

इलाहाबाद में समाजवादी पार्टी के माफिया सांसद अतीक अहमद के पक्के विरोधी बहुजन समाज पार्टी के विधायक राजू पाल की सनसनीखेज हत्या इसका एक नमूना है। असल में राजू पाल ने विधानसभा उपचुनाव में अतीक के भाई मुहम्मद अशरफ को पटखनी दे दी। तभी से दोनो के बीच का गैंगवार बेहद तल्ख हो गयी थी। इसके बाद कृष्णानन्द राय की हत्या से पूर्वांचल के गैंगवार को लेकर पूरे प्रदेश में एक लम्बी बहस शुरू हो गयी है। 1984 से 2005 के बीच वाराणसी, जौनपुर, गाजीपुर और आजमगढ़ में 80 से अधिक प्रमुख लोगों की जान गयी। सभी हत्याओं की कड़ी आपस में कहीं न कहीं जुड़ी है। यह बात तो पूरी तरह से स्पष्ट हैं कि ये हत्याएं वर्चस्व के लिए की गयी हैं, लेकिन किस वर्चस्व के लिए ? राजनीतिक वर्चस्व के लिए या कारोबारी वर्चस्व के लिए, धार्मिक—जातीय वर्चस्व के लिए या फिर आपराधिक वर्चस्व के लिए। यह बात कोई भी स्पष्ट रूप से नही कह सकता। यहां वर्चस्व की ढेर सारी वजहें इस तरह से गुंथी हुई हैं कि इन्हें अलग नही किया जा सकता। ताकत के बल पर राजनीति, कारोबार,

अपराध, जातीय–धार्मिक समुदाय, रंगदारी सब पर कब्जा करने की कोशिश की जा रही है। इस जंग में कोई भी सामने आयेगा तो उन्हें इनकी गोलियों का सामना करना पड़ेगा, खूनी जंग लड़नी पड़ेगी।

यही वजह है कि गिरोह आपस में टकरा रहे हैं। पूर्वी उत्तर प्रदेश में गैंगवार थमने का नाम नहीं ले रही है। माफियाओं की नजर वसूली और ठेके–पट्टे के अलावा शराब के कारोबार पर भी है। इस कारोबार में भी माफियाओं की घुसपैठ के बाद कई लाशें बिछ चुकी हैं। दुश्मनी और दोस्ती का नया खेल शुरू हो चुका है। अपराधियों के असलहों के सामने ने रिश्तों की कोई बिसात नही है।

असल में शराब के कारोबार में बड़ी आमदनी बढ़ने के साथ वाराणसी, आजमगढ़, लखनऊ, फैजाबाद, गोरखपुर और इलाहाबाद समेत अनेक स्थानों पर शराब कारोबारियों का सिंडीकेट बनने लगा। शराब कारोबारी राजनीति में सीधे उतरने लगे। जिन्हें अवसर नहीं मिला, वे राजनीतिज्ञों की मदद में जुट गये। ये सब जानते हैं कि शराब की बोली में राजनीतिक प्रभाव के अलावा दबंगई की भी जरूरत होती है। शराब के व्यवसाय की इसी कमजोरी का फायदा माफिया गिरोहों ने उठाया। एकतरफ वे अपनी हनक और धौंस से वसूली करते हैं तो दूसरी तरफ इन कारोबारियों के बीच समझौता कराने से लेकर दुकानों के आवंटन में भी अपनी भूमिका निभाने लगे हैं।

गुलशन कुमार की हत्या में इस्तेमाल किये गये असलहे पर 'मेड इन बम्हौर' लिखा था। मुम्बई पुलिस ने काफी माथापच्ची की तो पता चला कि आजमगढ़ के मुबारकपुर थाना क्षेत्र के एक कस्बे का नाम 'बम्हौर' है।

अपनी मौत से पहले वीरेन्द्र सिंह टाटा ने भी यही किया। उसने पहले आजमगढ़ में शराब के कारोबार में अपनी घुसपैठ बढ़ाई। इसके बाद अम्बेडकरनगर और फैजाबाद में भी उसने हाथ–पैर मारना शुरू कर दिया। फैजाबाद में वीरेन्द्र सिंह टाटा के मददगार के रूप में शराब कारोबारी रामसेवक सिंह आगे आये। रामसेवक सिंह और आजमगढ़ के एक शराब कारोबारी से बेहतर सम्बन्ध बनाने के बाद टाटा की निगाह गोरखपुर की ओर गयी। टाटा ने गोरखपुर के कुछ उभरते अपराधियों ओर मनबढ़ों को पहले से ही जोड़ लिया था। उसने यहां के हर शराब कारोबारी से रकम वसूलने की योजना बनायी। वह कुछ दुकानों का संचालन भी खुद करने के मूड में था। इन्हीं सब वजहों के चलते आजमगढ़ और मऊ में होने वाली शराब की बोलियों में भी वह एक कारोबारी को जाने से रोकना चाहता था। पर उस शराब व्यवसायी ने बात नहीं मानी। एक दिन वह शराब व्यवसायी अपने काफिले के साथ मऊ जा रहे थे। तभी बड़हलगंज में अत्याधुनिक असलहों से लैस गैंग ने उस पर हमला बोल दिया। इस हमले में शराब व्यवसायी तो बच गया लेकिन उसका अंगरक्षक मारा गया।

पूर्वांचल का यही दर्द है कि अब यहां हर समस्या का हल बंदूक की गोलियों से निकाला जाता है। कभी भी किसी मुद्दे पर शोले बरस सकते हैं, बंदूकें आग उगल सकती हैं और धरती पर इंसानी लहू पानी की तरह बह सकता है। सबसे ज्यादा दुखद तो यह है कि सियासत का फैसला भी बंदूकों की नालें तान कर किया जाने लगा है। इसका उदाहरण गाजीपुर का दिया जा सकता है। यहां सियासत की बंदूकों से नफरत की गोलियां निकल रही हैं। जिन्हें हम साधारण हत्या समझ रहे हैं, दरअसल ये राजनीति से प्रेरित हत्याएं हैं। एक बाद एक इन हत्याओं से पूरा इलाका दहल गया है। यहां के बुद्धिजीवी हाशिये पर आ गये हैं। वे घरों में बैठकर खून के दरिया के थमने का इंतजार कर रहे हैं।

अबू सलेम ने अपना कद बड़ा करने की चाह में कैसेट किंग गुलशन कुमार की हत्या करा दी। इस हत्याकाण्ड में उसने आजमगढ़ के शूटरों का इस्तेमाल किया।

2004 के संसदीय चुनाव के मतदान के दिन गाजीपुर के मुहम्मदाबाद कस्बा में हत्यारों ने रणजीत गिरहार की गोली मारकर हत्या कर दी थी। यहां हुई अंधाधुंध फायरिंग में चार अन्य भाजपा कार्यकर्ता घायल भी हो गये थे। उसी दिन शाम को बदमाशों ने यूसुफपुर रेलवे क्रासिंग पर सांसद रहे मनोज सिन्हा के गांव मोहनपुरा के रहने वाले शोभनाथ राय की गोली मारकर हत्या कर दी। इन दोनों मामलों में पुलिस हत्यारों तक नहीं पहुंच सकी। इसके बाद हत्यारों ने भाजपा के दिग्गज राजनाथ सिंह के रिश्तेदार अविनाश सिंह की दिनदहाड़े गोली मारकर हत्या कर दी। इस घटना में पुलिस ने स्थानीय दुश्मनी के आधार पर कुछ लोगों को गिरफ्तार कर जेल भेज दिया जबकि वास्तविक शूटर पुलिस की पकड़ से बाहर ही रहे।

यह सिलसिला यहीं नहीं थमा, सुखडेहरा के पूर्व ग्राम प्रधान देवेन्द्र राय के ऊपर भांवरकोल चट्टी पर प्राणघातक हमला हुआ। इसमें देवेन्द्र राय सहित दो व्यक्ति गंभीर रूप से घायल हुए। इस मामले में भी पुलिस अपनी सही मंजिल तक नही पहुंच पायी। कुछ दिनों बाद शेरपुर निवासी सपा समर्थक रामनारायन उर्फ डब्लू पहलवान की सुरतापुर

अबू सलेम के शूटरों ने सिर्फ आजमगढ़ ही नही वरन् पूरे पूर्वांचल में अपना नेटवर्क बना लिया। इन शूटरों ने कई बार मुंबई की सड़कों पर दिनदहाड़े हत्या की और वापस आकर आजमगढ़ में छुप गये।

के पास दिनदहाड़े गोली मारकर हत्या कर दी। डब्लू राय अपने घर से मुहम्मदाबाद आ रहे थे। इसके बाद डब्लू की हत्या के प्रतिक्रिया स्वरूप शेरपुर खुर्द में दो व्यक्तियों की गोली मारकर हत्या की गयी। कुछ ही दिनों बाद कुण्डेसर चट्टी से कुछ पहले सुखडेहरा के पूर्व ग्राम प्रधान देवेन्द्र राय के भतीजे अखिलेश राय और उनके साथी बृजराज पाठक की बदमाशों ने गोली मारकर हत्या कर दी। वे इलाहाबाद से अपने गांव सुखडेहरा जा रहे थे। इस घटना में भी पुलिस हवा में ही हाथ पांव मार रही है।

कुछ दिनों तक छिटपुट घटनाएं होती रहीं लेकिन 2005 के मई माह के मध्य में सपा नेता तथा जिला पंचायत सदस्य रमाकांत भारती उनके भाई अमरकान्त भारती की दिनदहाड़े हत्यारों ने आधुनिक असलहे से सुरतापुर के पास गोली मारकर हत्या कर दी। वे अपने घर से मुहम्मदाबाद आ रहे थे। इस घटना से पूरे क्षेत्र में सनसनी फैल गयी। पूरे दलित समाज में आक्रोश फैल गया। इस मामले में रमाकान्त भारती की पत्नी ने षड़यंत्रकर्ता के रूप में कृष्णानन्द राय और उनके दो समर्थकों जितेन्द्र राय और नागा राय को नामज़द किया। पुलिस ने देवेन्द्र राय, उनके भाई और एक अन्य ग्रामीण को षड़यंत्रकर्ता के रुप में गिरफ्तार कर पुरानी दुश्मनी को आधार मानते हुए उनका चालान कर दिया। घटना के कुछ दिनों बाद गोड़उर में भाजपा समर्थक रामेन्द्र राय की गोली मारकर हत्या कर दी गयी। इस घटना में उनका पुत्र और भतीजा भी घायल हो गया। फिर हत्यारों ने हद की सीमा को लांघते हुए दोनों हाथों में स्वचालित असलहों को लेकर राजेन्द्र राय को माठिया गांव में दौड़ाकर दर्जनभर से ऊपर गोलियां मारी। हत्या के बाद हत्यारे घटनास्थल से बड़े आराम से चले गये। दरअसल संसदीय चुनाव के दिन से हत्याओं का जो सिलसिला शुरू हुआ, उसने पूरे गाज़ीपुर को दहला कर रख दिया है। लोग समझ नहीं पा रहे हैं कि आखिर असलहों, हत्याओं की राजनीति कब, कहां और कैसे थमेगी?

यह समस्या केवल गाज़ीपुर की ही नही है, पूरा पूर्वी उत्तर प्रदेश इस समस्या का शिकार है। पूर्वी उत्तर प्रदेश का शायद ही कोई इलाका होगा, जहां माफिया कारोबार, सियासत और वर्चस्व के लिए न टकरा रहे हों। गोलियों की आवाज़ पर लाशें गिर रही

हैं। कौन कितनी फिरौती वसूलता है और कितना मज़बूत है, इसी की गुणा-गणित चल रही है। केवल एक हत्या हो तो गिनायी जाये। रंगदारी टैक्स के वर्चस्व को लेकर गैंग एक-दूसरे की जान के प्यासे बने रहते हैं। एक दौर था जब मुन्ना बजरंगी के शार्पशूटर अन्नू त्रिपाठी की तूती बोलती थी लेकिन अक्टूबर 2004 में अन्नू त्रिपाठी को दिल्ली में उसके एक और साथी रमेश यादव के साथ गिरफ्तार कर लिया गया। वाराणसी जेल में बन्द रहते हुए अन्नू ने जेल के भीतर से ही वसूली का चोखा धन्धा किया।

आजमगढ़ की बेरोजगारी का सबसे ज्यादा फायदा अबू सलेम ने उठाया। उसने मुम्बई अण्डरवर्ल्ड को सबसे सस्ते शूटर आजमगढ़ से उपलब्ध कराये।

वाराणसी अंडरवर्ल्ड में 1995-96 में अन्नू का उदय एक दुस्साहसिक युवक के रूप में हुआ, जिसका कोई निशाना खाली नहीं जाता था। सालभर में ही उसने अपने भरोसेमंद साथी रमेश यादव उर्फ बाबू से मिलकर वाराणसी और आसपास के जिलों में तहलका मचा दिया। ताकत बढ़ने पर पूर्वी उत्तर प्रदेश ही नहीं बल्कि दोनों दिल्ली-हरियाणा तक अपने अपराध के जौहर दिखाने लगे। अपहरण और हत्या में उस गुट ने जमेजमाये उस्तादों को पीछे छोड़ दिया। इस बीच कुख्यात सरगना मुन्ना बजरंगी की निगाह अन्नू और बाबू पर पड़ी तो उसने दोनों को पूर्वांचल का इलाका सौंप दिया। या ये कहिए कि दोनों को उस इलाके में वसूली की फ्रेंचायज़ी दे दी।

दिल्ली में गिरफ्तारी के बाद दोनों को वाराणसी जेल में रखा गया तो वहीं से वो रंगदारी, फिरौती और अपहरण की रकम की वसूली करने लगे। अन्नू पर ही मार्च 2004 में जिला जेल के अंदर सभासद और अपराध जगत में जुड़े वंशी यादव की हत्या का आरोप लगा। बताया जाता है कि उसने जेल में रहते हुए हजारों रुपयो की रंगदारी के वारे-न्यारे किये। यहां तक कि उसने जेल में रहते हुए गांजा तस्करी के आरोप में बन्द एक व्यापारी से पांच लाख रुपये मांगे और न मिलने पर पिटाई की!

लेकिन रंगदारी पर कब्जा जमा रहे अन्नू को विरोधी गैंग जिंदा नही देखना चाह रहा था। 5 मार्च 2005 को माफिया अनुराग त्रिपाठी 'अन्नू' पर उस समय हमला हुआ, जब उसको वाराणसी की अदालत में पेशी के दौरान हाजिर कराने के बाद नैनी जेल वापस ले जाया जा रहा था। रास्ते में पुलिस वैन पर हुए इस हमले में वह बच गया। अन्नू ने इस हमले का आरोप विनीत सिंह, बृजेश सिंह के भतीजे सुशील सिंह, विधायक

उदयभान सिंह और त्रिभुवन सिंह पर लगाया। इस हमले के साथ ही बृजेश सिंह और मुन्ना बजरंगी की बीच दुश्मनी की खाई और गहरी हो गयी। इसके बाद अन्नू ने अपनी सुरक्षा के लिए नैनी जेल से वाराणसी जेल में भेजे जाने की अपील की, जो मान ली गयी। उसे वाराणसी के सेंट्रल जेल में रखा गया, जहां उसका धुर विरोधी विनीत सिंह पहले से बंद था। उधर, अन्नू का शिष्य रह चुका संतोष गुप्ता 'किट्टू' भी हत्या के मामले में जेल की सींखचों के पीछे आ गया। जिस तरह से दोनों गुटों के शातिर बदमाश यहां इकट्ठा हुए थे, ये माना जा रहा था कि कोई बड़ी घटना हो सकती है। अन्नू त्रिपाठी यहां भी अपराध जगत का चढ़ता सूरज बना हुआ था। रंगदारी पर उसने कब्जा जमा लिया था। अपहरण और फिरौती की दर्जनभर वारदातें कर उसने सनसनी फैला दी थी। कहा जाता है कि वाराणसी के गोदौलिया टैक्सी स्टैण्ड की वसूली पर भी उसने धावा बोल दिया था। यहां पहले उसका शागिर्द किट्टू वसूली किया करता था। उसी के चलते अन्नू और किट्टू के संबंध खराब हुए। इसका फायदा अन्नू के विरोधी गुट ने उठाया। बताया जाता है कि इस गुट ने अन्नू के लिए किट्टू को 15 लाख रुपये की सुपाड़ी दे दी। बस फिर क्या था, किट्टू ने अपराध जगत में अपने गुरु रहे अन्नू को ठिकाने लगाने की ठानी। 13 मई 2005 को सुबह 10:30 बजे किट्टू अपने बैरक से निकल कर अन्नू के बैरक में गया। अपने पुराने शिष्य किट्टू को देखकर उसे जरा भी शक नहीं हुआ। लेकिन किट्टू का इरादा कुछ और ही था, उसने भरी पिस्तौल निकाल कर तीन गोलियां अन्नू के सीने में उतार दीं। इस हत्या ने माफिया सरगना मुन्ना बजरंगी गिरोह को बुरी तरह से हिला कर रख दिया।

दाढ़ी वाले अबू सलेम को स्मार्ट अबू सलेम बनाने में एक हिट अभिनेता ने अपनी भूमिका निभाई। 2001 में इस अभिनेता ने केन्या से कुछ स्टेरायड और शरीर की मांसपेशियां उभारने वाली दवाई बांद्रा के एक जिम में अबू सलेम को देकर स्मार्ट बनाया। यह चमत्कार मात्र 20 दिन में हुआ।

मुन्ना बजरंगी के लिए ये हत्या जहां बड़ा झटका थी वहीं बृजेश सिंह गिरोह ने इस हत्या का जश्न मनाया। इस हत्या से उस समय जेल में बन्द माफिया विनीत सिंह की हनक कायम हुई। विनीत सिंह बृजेश सिंह का समर्थक माना जाता है। कहा जाता है कि विनीत सिंह मुख्तार अंसारी के दबदबे को कम करने की कोशिश कर रहा है। ज़ाहिर है मुख्तार अंसारी के सामने विनीत सिंह भी चुनौती बना। लगातार मजबूत हो रहे विनीत

सिंह का मुख्तार अंसारी के गुट को खटकना स्वाभाविक है। विनीत सिंह की राजनीतिक साख़ को भी मजबूत माना जाता है। जेल से छूटने के बाद जब रघुराज प्रताप सिंह 'राजा भैया' वाराणसी गये थे तो राजा भैया और प्रदेश के जल संसाधन और परती भूमि विकास मंत्री ओमप्रकाश सिंह जेल में विनीत सिंह से मिलने गये थे। बाद में विनीत सिंह ने जिला कोआपरेटिव बैंक के चैयरमैन का चुनाव लड़ा और जीता भी। इसके बाद वाराणसी के एस. एस.पी. ने उसके घर छापा डलवाया, जहां भारी मात्रा में असलहे बरामद हुए।

पूर्वांचल के माफिया गिरोह हथियारों के मामले में सबसे ज्यादा मजबूत रहे हैं। इन गिरोहों के पास 9 एम.एम. से लेकर कारबाइन, ए. के.–47 और 56 जैसे हथियार बीती सदी के 80 के दशक से हैं।

यह कहने की जरूरत नही कि अपराध और आंतक का पर्याय बने लोगों ने राजनीतिक मुकाम हासिल किये हैं और लगातार मजबूत हो रहे हैं। राजनीतिक लड़ाई और गैंगवार में अंतर करना मुश्किल हो गया है। इन दिनों पूर्वांचल में हर बात का जवाब गोली के धमाके से दिया जा रहा है। वैसे तो प्रदेश में माफिया गिरोहों के गैंगवार का इतिहास काफी पुराना है लेकिन इसमें कोई शक नही कि उत्तर प्रदेश के अपराध जगत की माफिया संस्कृति पूर्वांचल के गिरोहों ने ही दी है। इसमें जरायम के टेढ़े रास्ते से होते हुए राजनीतिक मुकाम हासिल करने वाले हरिशंकर तिवारी और वीरेन्द्र शाही के नाम भी आते हैं। इन दोनों गुटों ने प्रदेश में माफिया गिरोहों के टकराव को जन्म दिया और विस्तार भी। पूर्वी उत्तर प्रदेश की सबसे बड़ी समस्या यह रही कि आजादी के बाद भी यहां गरीबी और पिछड़ापन दूर नहीं हो सका। सामंतशाही बनी रही, तो सवर्णों ने पिछड़ों को मौका देने से रोकने की कोशिश की। गोरखपुर से शुरू हुई माफिया संस्कृति के प्रणेता जातिगत आधार पर बंटे रहे। हरिशंकर तिवारी और वीरेन्द्र प्रताप शाही के बीच छिड़ी जंग को हमेशा ठाकुर–ब्राह्मणों के वर्चस्व की लड़ाई के रूप में देखा गया। दोनों की रंजिश की मुख्य वजह धनाड्यों से उगाही और रेल ठेके पर कब्ज़ा था लेकिन जातिगत वैमनस्य की आड़ में दोनों गुटों ने एक–दूसरे के दर्जनों समर्थकों का खून बहाया। यह इन बाहुबलियों की वीरता थी कि अस्सी के दशक के शुरुआती वर्ष में बी.बी.सी. ने गोरखपुर को 'मिनी शिकागो' बताया।

हालात ने करवट ली। राजनीति का आकर्षण बढ़ा। ये लगा कि वो चुनाव जीतकर संसद और विधानसभा में भी पहुंच सकते हैं। फिर क्या था हरिशंकर तिवारी ने चिल्लूपार

सीट जीत कर विधानसभा में इंट्री ली। वीरेन्द्र प्रताप शाही भी हरिशंकर तिवारी से कम न थे। उन्हें भी राजनीति में जगह कायम करने की जरूरत महसूस हुई। उन्होंने पहली बार वर्ष 1974 में किस्मत आजमायी लेकिन सफलता नहीं मिली। आखिरकार 1981 के

1947 में बनी पहली ए.के. रायफल

○ *ए.के.–47 रायफल का पूरा नाम है 'आटोमेटिक कलाशनिकोव राइफल 1947'। इस एसाल्ट रायफल को सोवियत संघ के मिखाइल कलाशनिकोव ने 1947 में डिज़ाइन किया था और सबसे पहले इसका उत्पादन रूसी हथियार निर्माता आई.ज़ेड. एच. ने किया था। सोवियत संघ समर्थित देशों ने शीतयुद्ध के दौरान इस हथियार का उपयोग किया। द्वितीय विश्वयुद्ध में उपयोग में लायी गयी राइफलों से अगर तुलना की जाये तो ए.के.–47 ज्यादा हल्की और प्रयोग में आसान है। यह माना जाता है कि ए.के.–47 पहली एसाल्ट राइफल नहीं थी, इससे पहले इटली, रूस और जर्मनी की एम.पी.–44 राइफल डिज़ाइन की गयी थी। ए.के.–47 राइफल हालांकि 1947 में डिज़ाइन की गयी थी, लेकिन 1956 के बाद ही सोवियत सेना को यह राइफल उपलब्ध करायी जा सकी थी।*

ए.के.एम.

बाद में ए.के.–47 राइफल में काफी सुधार किया गया। इस राइफल को और बेहतर बनाया गया। यह ए.के.एम. कहलायी, जो 1956 में बनकर तैयार हुई। ए.के.एम. रायफल में 'एम' का मतलब मॉडर्न या आधुनिक है। दरअसल जिसे ए.के.–47 राइफल कहते हैं, उनमें से ज्यादातर राइफलें ए.के.एम. राइफलें ही हैं क्योंकि सोवियत संघ ने जितनी ए.के. राइफलों का उत्पादन और निर्यात किया, उनमें ज्यादातर ए.के.एम. राइफलें ही थीं।

ए.के.74

ए.के.–47 और ए.के.एम. राइफल को और बेहतर बनाया गया, जो ए.के.–74 राइफल कहलायी। इस राइफल को 1974 में डिज़ाइन किया गया हालांकि इनका उत्पादन 1976 में शुरू हुआ।

ए.के.101

ए.के. 101 भी कलाशनिकोव सिरीज़ की ही एसाल्ट राइफल है। ए.के.–101 राइफल को विश्व बाजार को ध्यान में रख कर डिज़ाइन किया गया। इस राइफल से सेमी आटोमैटिक और आटोमैटिक दोनों तरह के काम लिये जा सकते हैं।

ए.के. 103, ए.के. 107, ए.के. 108

ए.के.–101 में थोड़े परिवर्तन कर ए.के.–103 और ए.के.–10 एक्स सिरीज़ की राइफल तैयार की गयी। जबकि उन्हें और बेहतर बना कर ए.के.–107 और ए.के. –108 एसाल्ट राइफलों का डिज़ाइन किया गया।

विधानसभा चुनाव में उनकी किस्मत खुली और उन्होंने गोरखपुर की लक्ष्मीपुर सीट से जीत दर्ज की। इन लोगों के राजनीतिक चोला ओढ़ लेने के चलते पुलिस के लिए उनके गुटों पर अंकुश लगाना कठिन हो गया था। दोनों गुटों ने इसका खूब फायदा उठाया। राजनीति में आने के बाद दोनों के बीच खूनी खेल तो कम हुआ लेकिन ठेकों के लिए उठापटक जारी रही। रेल के ठेके ही वीरेन्द्र प्रताप शाही की मौत का सबब बने। रेल ठेकों पर वर्चस्व कायम करने की होड़ में अचानक खतरनाक माफिया के रूप में उभरे श्रीप्रकाश शुक्ला ने 31 मार्च 1997 को लखनऊ के इंदिरानगर इलाके मे वीरेन्द्र प्रताप शाही को गोलियों से छलनी कर दिया। इस जघन्य हत्या में ए.के.–47 की तड़तड़ाहट दूर तक सुनी गयी। यह पहला मौका था जब राजधानी लखनऊ में ए.के.–47 गरजी थी।

उधर, हरिशंकर तिवारी राजनीति की सीढ़ियां चढ़ते गये। उत्तर प्रदेश में जबसे गठबंधन की सरकारों का दौर शुरू हुआ। बाहुबलियों ने सरकार की अस्थिरता का पूरा फायदा उठाया। हरिशंकर तिवारी के खिलाफ ढेरों अपराधिक मामले दर्ज हुए लेकिन इसका उन्हें कोई नुकसान नहीं हुआ। दागदार छवि के बावजूद राजनीति के पाला बदल खेल में उन्हें फायदा ही रहा। हरिशंकर तिवारी उन खुशनसीब विधायकों में से हैं, जिन्होंने अलग–अलग दलों की विभिन्न सरकारों में मंत्री पद की शोभा बढ़ायी। सरकार चाहे कल्याण सिंह, रामप्रकाश गुप्त की रही हो या फिर राजनाथ सिंह उन्हें मंत्रिमण्डल में जगह मिली। मायावती और मुलायम सिंह यादव ने भी इन्हें अपने मंत्रिमण्डल में लेने में हिचक महसूस नहीं की। और अकेले तिवारी ही नही हैं जिनके खिलाफ मामला दर्ज है। कई आपराधिक मामलों के आरोपी मंत्रिमंडल की शोभा बढ़ा रहे हैं। आपराधिक इतिहास वाले लोगों के लिए राजनीति में इस तरह की सफलताएं एक नजीर बन कर उभर रही है।

क्या कोई ए.के.–56 राइफल भी है?

○ *क्या कोई ए.के.–56 एसाल्ट राइफल भी है? अगर यह सवाल पूछा जाये तो ज्यादातर लोग इसका जवाब 'हां' देंगे लेकिन इसका सही जवाब है 'नहीं'। लोग यह समझते हैं कि ए.के.–47 का बेहतर डिजाइन ए.के.–56 है लेकिन हकीकत यह है कि ए.के.–56 नाम की कोई राइफल ही नहीं है। चीन निर्मित 'टाइप–56' राइफल को प्रायः लोग ए.के.–56 राइफल समझते हैं। पूरी दुनिया का मीडिया यह गलती करता है। इसकी वजह यह है कि चीन की 'टाइप–56' राइफल ए.के.–47 राइफल की नकल है। चाइनीज़ मिलिटरी राइफल टाइप–56 तीन तरह की हैं और इनका नाम 'टाइप–56', 'टाइप–56–1' और 'टाइप 56–2' है। 'टाइप–56' राइफल चीन की 'टाइप–56 कारबाइन' से भिन्न है।*

अब यह पूरी तरह से साफ हो गया है कि भले ही किसी माफिया का इतिहास अपहर फिरौती, रंगदारी और खूनी खेल से भरा रहा हो लेकिन राजनीति में उनके लिए ज है। वो चुनाव लड़ सकते हैं, जीत सकते हैं और हां, माननीय मंत्री भी बन सकते है

जाहिर है इन बाहुबलियों ने माल कमाने और राजनीति में जगह बनाने का रास्त नयी पीढ़ी को दिखा दिया है। अपराध का ग्लैमर इस कदर बढ़ा है कि गोली चलाना अ किसी की जान लेना अब कोई असंभव काम नहीं है और हां, बुरा भी नहीं है। नयी पी का फटाफट माल कमाने का यह आसान रास्ता नज़र आ रहा है। उन्हें यह भी पता कि पैसे के लिए वो भले ही अपराध करें लेकिन बाद में राजनीति भी कर सकते हैं। पुलि के सामने सबसे सरल रास्ता तमाशा देखना है। पुलिस ने कभी जानबूझकर तो क मजबूरी में उन्हीं की मदद की, जिसने असलहा उठाया। 4 अगस्त 2004 को जब गोरखपु में लोकतांत्रिक कांग्रेस के नेता राणा शाही की हत्या हुई थी तो आरोप लगा कि मौके प मौजूद पुलिस ने हत्यारों को पकड़ने की बजाय उन्हें सुरक्षित स्थान पर पहुंचने में मद की। यही आरोप 8 मई 2005 को कौड़ीराम के गोड़सरी गांव में एक भूमि विवाद में 5 वर्षीय रामजी निषाद की हत्या हुई, तब भी लगा। इसी तरह 29 जुलाई 2005 को गोरखपु के पंडित के नगवा गांव में स्नातक छात्र अतुल मिश्रा को बदमाशों ने गोलियों से भू दिया। यह हत्या तब हुई, जब वहां तीन पुलि वाले मौजूद थे।

> **बेहद नियोजित तरीके से ए.के.–47 रायफल राज्य में शातिर अपराधियों को उपलब्ध हो रही हैं और वह भी मात्र कुछ लाख रुपये में।**

लेकिन एक सच और है। जवान होती य फिर जवान हो चुकी नयी पीढ़ी ने अपराधियों के फटाफट कमायी के ग्लैमर को ही देखा, उनके हश्र को नहीं। याद कीजिए माफिया और शार्पशूट श्रीप्रकाश शुक्ला को। श्रीप्रकाश शुक्ला ने डेढ़–दो साल में ही अंडरवर्ल्ड में तूफान खड़ा कर दिय था। अपराध के बड़े–बड़े तीरंदाजों की रूह श्रीप्रकाश शुक्ला का नाम सुनते ही कांप जाती थी। ये श्रीप्रकाश शुक्ला ही था, जिसने लखनऊ की सड़क को खून से रंगा। ये श्रीप्रकाश ही था, जिसको निपटाने के लिए स्पेशल टास्क फोर्स का गठन किया गया। रेलवे के ठेकों पर वर्चस्व के लिए उसने लखनऊ को ए.के.–47 के धमाकों से गुंजा दिया। पहले उपेन्द्र विक्रम सिंह, 11 जनवरी 1997 को लॉटरी व्यवसायी विवेक श्रीवास्तव और फिर बिल्डर मूलराज अरोड़ा पर श्रीप्रकाश शुक्ला ने धावा बोला। श्रीप्रकाश ने ही हुसैनगंज के दिलीप

होटल में ठेकेदार भानुप्रकाश पर हमला किया। दहला देने वाली गोलियों की आवाज़ से होटल के आस–पास का इलाका गूंज गया। होटल के कमरे को खून से सराबोर करने के बाद अपराधी आराम से निकल गये। इस जबर्दस्त हमले के बावजूद भानु तो बच गया लेकिन उसके दोस्त विवेक शुक्ला की जान चली गयी। श्रीप्रकाश ने यह हमला एक रेलवे ठेकेदार के कहने पर किया था।

गोरखपुर स्थित पूर्वोत्तर रेलवे मुख्यालय के ठेके गैंगों की अदावत की जड़ बनकर उभरे थे। कौन नही था जिसकी रातोंरात करोड़पति बनने का सपना देखने वाले श्रीप्रकाश शुक्ला के नाम से रूह फना नही होती हो। खतरनाक और आधुनिक असलहों का किस हद तक दुरुपयोग किया जा सकता है, अपराधियों को यह श्रीप्रकाश शुक्ला ने ही बताया। उसको पता था कि चन्द घंटों या कुछ दिनो में करोड़ों की दौलत कैसे कमायी जा सकती है। श्रीप्रकाश शुक्ला रातोरात अमीर बनना चाहता था। उसको यह भी पता था कि पैसा और ताकत दोनो हों तो राजनीति में मुकाम हासिल करना कोई कठिन काम नहीं है। यह बात भी लोग मानते हैं कि बहुत से ऐसे नेता थे, जो श्रीप्रकाश शुक्ला को संरक्षण देते थे। 27 साल के श्रीप्रकाश शुक्ला ने अपना आपराधिक इतिहास 1993 से गढ़ना शुरू किया। उसकी राह बिहार के खतरनाक अपराधी सूरजभान ने आसान की। सूरजभान उसे हथियार की आपूर्ति करता था। श्रीप्रकाश शुक्ला का मुख्य काम रेलवे ठेकों पर वर्चस्व कायम करना था। जो लोग उसकी बात नही सुनते थे, उनकी लाश गिराने में श्रीप्रकाश शुक्ला को वक्त नही लगता था। 9 सितम्बर 1997 को पुलिस और श्रीप्रकाश शुक्ला टकराये भी, लेकिन श्रीप्रकाश शुक्ला बच के भागने में कामयाब रहा। लखनऊ दारुलशफा में हुई इस मुठभेड़ में एक सब इंस्पेक्टर को जान से हाथ धोना पड़ा। ये श्रीप्रकाश शुक्ला ही था, जो बिहार में एक मंत्री बृजबिहारी और उत्तर प्रदेश के विधायक वीरेन्द्र शाही की मौत का सबब बना। उसके ऊपर उत्तर प्रदेश में 26 से ज्यादा आपाराधिक मामले दर्ज हुए थे।

पिस्टल

- *पंद्रहवीं शताब्दी में पिस्टल शब्द उन छोटे चाकुओं और कटारों के लिए उपयोग होता था, जो कपड़े में छुपा कर रखे जा सकते थे। इसके बाद अठारहवीं शताब्दी में छोटे आग्नेयास्त्रों के लिए इस शब्द का उपयोग होना शुरू हो गया। पिस्तौल शब्द फ्रेंच शब्द 'पिस्टाला' से लिया गया है, जिसका मतलब बांसुरी या पाइप होता है। पिस्टल सामान्यतया तीन तरह की होती हैं– सिंगल शॉट पिस्टल, रिवाल्वर और सेमी–आटोमैटिक पिस्टल।*

जिस तरह से अपराधी राजनीति में अपने पांव पसार रहे हैं, उससे लगता है कि राजनीति में आना उनकी मोडस ऑपरेंडी का एक हिस्सा बन गया है।

श्रीप्रकाश शुक्ला की शामत तब आयी, जब हवा उड़ी कि तत्कालीन मुख्यमंत्री कल्याण सिंह की हत्या के लिए उसने करोड़ों रुपये की सुपाड़ी ली है। एस.टी.एफ. पहले से ही उसके पीछे लगी हुई थी। 2 लाख रुपये के शातिर बदमाश के बारे में पुलिस को सूचना मिली कि तीन बदमाश नीले रंग की एच.आर. 26–7305 नंबर की सीलो कार से नोयडा से दिल्ली की तरफ आ रहे हैं। पुलिस ने घेराबंदी कर उन्हें रोकने की कोशिश की तो कार वसुंधरा की तरफ मुड़ गयी। अंततः पुलिस उन्हें घेरने में कामयाब हुई। 22 सितम्बर 1998 को मुठभेड़ में श्रीप्रकाश शुक्ला और उसके दो साथी अनुज प्रताप सिंह और सुधीर त्रिपाठी मारे गये। उसके पास से दो रिवाल्वर और 50 हजार रुपये बरामद हुए। इसके साथ ही उन दौलतमंद लोगों की दहशत का भी अंत हुआ, जिनसे श्रीप्रकाश शुक्ला फिरौती वसूलना चाहता था। भले ही श्रीप्रकाश शुक्ला अपराधियों की मौत मरा, लेकिन इस हकीकत को भी लोग जानते हैं कि उसका लक्ष्य राजनीति में जगह बनाना था। वह आज अगर जिंदा होता तो हो सकता है कि उसकी गिनती माननीयों में होती।

यह दुर्भाग्य ही है कि पिछले कुछ दशकों से गोरखपुर का इलाका बाहुबलियों और शुद्ध माफिया शूटरों की वजह से ज्यादा चर्चित रहा है। वजह चाहे जो भी हो, अपराध के एक से एक धुरंधर इस इलाके में पनपे। अपने बुरे कारनामों से पूर्वांचल को शर्मसार किया। यहां ऐसे राजनेताओं, ठेकेदारों, दबंगों, माफियाओं की संख्या बढ़ी है, जिनके पीछे असलहाधारियों की फौज चलती है। बाहुबलियों की हनक, हैसियत यहां काफी ज्यादा है। और बात जब बाहुबल और राजनीति की हो रही तो अमरमणि त्रिपाठी का नाम कैसे छूट सकता है। पुलिस अधिकारी के बेटे अमरमणि त्रिपाठी का नाम ढेरों आपराधिक मामलों में आया। अमरमणि त्रिपाठी बाहुबली हरिशंकर तिवारी का हाथ पकड़ कर आगे बढ़े और उनके रास्ते का अनुसरण कर मंत्री पद तक का सफर तय किया। आपराधिक आरोप होने के बावजूद उन्होंने राजनीतिक रसूख़ हासिल किया। मंत्री पद भी सुशोभित किया। निर्दलीय विधायक बने थे, तो जाहिर है प्रदेश की अस्थिर राजनीति में उनके दोनों हाथ में मलायी थी। इस राजनीतिक दल की सरकार हो या उस राजनीतिक दल की, अपनी हैसियत बनाये रखना उनके लिए कठिन नही था। ऐसे में मंत्री पद मिला तो कोई आश्चर्य नही होना चाहिए। हिम्मतियों और असलहेदार चेलों से घिरे रहने वाले अमरमणि त्रिपाठी को ताकत के बल पर डराना आसान नहीं था, लेकिन एक कवियित्री ने अपने जिंदा रहते हुए और फिर अपने मरने के बाद अमरमणि त्रिपाठी और उनके पूरे परिवार को झकझोर कर रख दिया।

9 मई 2003 को लखनऊ की मध्यमवर्गीय पेपर मिल कॉलोनी में जब कवियित्री मधुमिता शुक्ला की हत्या हुई थी, तो किसी ने ये नहीं सोचा था कि हत्या की एक खबर लगातार कई साल तक अखबारों की सुर्खियों में छायी रहेगी। न्यूज़ चैनल इस खबर को लेकर सालों खेलते रहेंगे। जब मधुमिता की हत्या हुई तो उसके पेट में छह माह का गर्भ पल रहा था। इस हत्याकाण्ड को ठंडे बस्ते में डालने की पुलिस की लाख कोशिशों के बावजूद अमरमणि त्रिपाठी का नाम तेजी से उछला और इतना उछला की पूरे देश में छा गया। तत्कालीन मायावती सरकार ने अपने मंत्री को बचाने के लिए पूरी कोशिश की। पुलिस ने भी अमरमणि को बचाने की जीतोड़ कोशिश की, कोशिशें अमरमणि के पत्रकार दोस्तों ने भी की। लेकिन सभी जतन करने के बावजूद अमरमणि त्रिपाठी बचने में नाकाम रहे। मामले ने इतना तूल पकड़ लिया कि उसे नज़रअंदाज करना संभव नहीं था। 19 जून 2003 को तत्कालीन मुख्यमंत्री मायावती सी.बी.आई. जांच का आदेश देने को मजबूर हुईं और साथ ही अमरमणि की बचाव की सारी कोशिशें एक–एक कर धराशायी होने लगी। सी.बी.आई. ने अमरमणि त्रिपाठी को जेल का रास्ता दिखाया। उनकी पत्नी मधुमणि को भी जेल जाना पड़ा।

अतीक अहमद को संसद में जाने का मौका फूलपुर संसदीय सीट से मिला। यह वही संसदीय सीट है जहां से देश के पहले प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू चुनाव जीता करते थे।

यह सब जानते हैं कि जेल अपराध और राजनीति दोनों का एक अंग है। लेकिन जेल जाना ही समस्या का निदान नही है। बहुत से ऐसे लोग हैं, जिनके बारे में ये तय करना मुश्किल हो जाता है कि जेल में एक अपराधी बन्द है या फिर एक राजनेता। हालात ऐसे हैं कि अब जेल जाना कोई सजा नही है। जेल में बाहुबलियों के मज़े किसी से छुपे नही हैं। अपने शुरुआती दौर से लेकर आजतक अपराधियों और राजनेताओं का बढ़ता गठजोड़ खतरनाक है। सूची के डॉन अबू सलेम कयूम अंसारी उर्फ अबू सलेम को ही लें, उसने यूपी में सीधे खुद कोई अपराध नहीं किया। मगर, अबू सलेम ने उत्तर प्रदेश

खासतौर से पूर्वांचल में अपराध का एक नेटवर्क खड़ा कर लिया था। ऐसा संभव नही है कि जो अपराधी उसके नेटवर्क में थे, उनमें से किसी के भी राजनेताओं से संबंध न रहे हों। दाऊद इब्राहिम के अवैध कारोबार की जमीन उसके इशारे पर ही तैयार हुई। हालांकि बाद में वह 'डी' कंपनी से अलग हो गया। उसके गुर्गों ने कानपुर, वाराणसी, आजमगढ़, रायबरेली, इलाहाबाद, लखनऊ समेत पूर्वांचल के गांवों में न सिर्फ करोड़ों की बेनामी सम्पत्तियां खरीदी बल्कि नौकरशाहों और राजनेताओं से मजबूत 'गठजोड़' भी कर लिया। इसी के बूते फर्जी नाम–पते से अबू सलेम का पासपोर्ट जारी हो गया था।

क्या ये दुखद नही है कि अपराधियों और कारोबारियों के शिकंजे में जकड़ चुके आजमगढ़ की पहचान अब अंडरवर्ल्ड के डॉन अबू सलेम से जुड़ा होने के नाते अधिक होती है। अबू सलेम ने इसी जिले के सरायमीर में रहते हुए मामूली मोटर मकैनिक से अंडरवर्ल्ड डॉन तक का सफर तय किया। आजमगढ़ मुख्यालय से तकरीबन 35 किलोमीटर दूर बसे सरायमीर कस्बे के पठानी टोले में जन्म लेने वाले अबू सलेम के सिर से पिता का साया बचपन से ही उठ गया। अबू के पिता अब्दुल अंसारी अधिवक्ता थे। आजमगढ़ की टौंस नदी के पुल पर एक दुर्घटना में उनकी मौत हो गयी थी। उनकी मौत के बाद उनका परिवार रोजी–रोटी का मोहताज

वाराणसी में ए.के.–47 की तड़तड़ाहट

मई 1986

चौकाघाट पर उपनगर प्रमुख अनिल सिंह के काफिले पर हमला, दो साथी मारे गये।

जुलाई 1988

लहुराबीर में एक सैलून में बृजेश गुट के अशोक कुमार भूना।

फरवरी 1995

हुकुलगंज में राजेन्द्र सिंह, बड़े सिंह पर ए.के.–47 चली और उनकी मौत हुई।

जून 1995

जिला पंचायत अध्यक्ष जवाहर जायसवाल पर पुलिस लाइन चौराहे के समीप हमला, अंगरक्षक घायल।

6 अप्रैल 1997

नरिया चौराहा पर विद्यापीठ छात्रसंघ अध्यक्ष सुनील राय समेत चार मारे गये।

9 फरवरी 2001

हुकुलगंज से चमड़ा व्यवसायी रामजी पर हमला पुलिस अंगरक्षक, चाय विक्रेता समेत तीन मारे गये।

अक्टूबर 2002

नदेसर इलाके में विधायक धनंजय सिंह के काफिले पर हमला, आधा दर्जन घायल।

17 दिसम्बर 2002

मलदहिया चौराहे पर अनिल राय समेत चार भूने गये।

हो गया। ऐसे में अबू सलेम ने परिवार का खर्च चलाने का बीड़ा उठाया। चार भाइयों में अबू सलेम दूसरे नंबर का है। उससे बड़ा अबू हाशिम और उससे छोटे अबू लैश एवं अबू जैश उर्फ टुनटुन है।

परिवार की आर्थिक तंगी से उबारने के लिए अबू सलेम ने एक गैराज में मोटर मकैनिक का काम शुरू किया, पर शायद उसके हाथों कुछ और ही होना लिखा था। अबू का इस काम में मन नहीं लगा, उसने नेपाल से कपड़ा और इलेक्ट्रॉनिक सामान लाने और यहां बेचने का काम शुरू किया। यहीं से उसे तस्करी के जरिये पैसा कमाने की लत लगी। बाद में और पैसा कमाने की चाह लिए वह कम उम्र में ही अपने साथी निजाम के साथ मुंबई पहुंच गया। वहां अंधेरी इलाके में उसने लेडीज़ टेलर की दुकान पर काम कर लिया। इस दौरान उसका लगातार सरायमीर आना–जाना लगा रहा। घरवालों ने पड़ोस के संजरपुर बाजार के खुदादपुर कस्बे में अबू का निकाह कर दिया। पर अबू ने छह महीने बाद ही अपनी बीवी को तलाक दे दिया। इसके बाद वह मुंबई जा बसा।

पूर्वांचल में साम्प्रदायिकता की जड़ें लगातार गहरी हो रही हैं। कभी वोटों के लिए साम्प्रदायिकता फैलायी जा रही है तो कभी अपराधी अपनी काली करतूतों को छुपाने के लिए साम्प्रदायिकता फैला रहे हैं।

महज 13 साल की उम्र में अबू सलेम आजमगढ़ के सरायमीर गांव से मुम्बई के लिए भागा तो शायद ही उसके डॉन बन जाने का भान रहा हो। मगर, चार साल बाद जब वह गुपचुप गांव लौटा तो उसके तेवर बदले हुए थे। वह मेहनगर थाना क्षेत्र के दाऊद के भाई मुस्तकीम के ससुराल विसहम गांव के एक व्यक्ति के जरिये दाऊद इब्राहिम से जुड़ चुका था। एक गरीब घर का लड़का दाऊद इब्राहिम का लेफ्टिनेंट बन चुका था। कुछ दिनों में ही उसने गांव में युवाओं को सब्जबाग दिखाकर उनमें भी दाऊद इब्राहिम का गुर्गा बनने का जज़्बा भर दिया। पुलिस को कुछ भनक लगी तो परिवार के पुरुष गांव से तितर–बितर हो गये। कुछ समय के लिए उसने घरवालों से अपने संबंध तोड़ लिए।

दाऊद गिरोह का सक्रिय सदस्य बनने के बाद अबू सलेम मुंबई के अंधेरी इलाके के कुख्यात तस्कर बाबा भाई के साथ मिलकर सोने की तस्करी करने लगा। इस काले कारोबार से उसने जहां काफी पैसा कमाया, वहीं अपने काम की बदौलत वह जल्द ही दाऊद का चहेता भी बन गया। 1992 के मुंबई दंगे और 1993 के विस्फोट के बाद अबू

सलेम को अच्छा अवसर मिला। पुलिस की निगाह में चढ़े दाऊद को हिंदुस्तान में अपने लिए एक अच्छे 'मैनेजर' की तलाश थी, जो उसके विदेश चले जाने के बाद अंडरवर्ल्ड का काम संभाल सके। मौका अबू सलेम को मिला। हालांकि बम विस्फोटों के बाद उसकी भी तलाश चल रही थी, पर अबू भूमिगत होकर आजमगढ़ में सक्रिय हो गया। यहीं से उसने आजमगढ़ में अंडरवर्ल्ड का जाल फैलाना शुरू किया। यहां रहते हुए अबू सलेम ने ढेरों 'आदमी' बनाए। उसके गिरोह में भर्ती के लिए जाति–धर्म का कोई पैमाना नहीं था। बस दम–खम और हिम्मत होनी चाहिए थी। हिन्दी साप्ताहिक आउटलुक ने अपने 9 अगस्त 2004 के अंक में लिखा है कि अबू सलेम ने अपने लोगों में असलहा और पैसा बांटा। बहुत जल्द ही उसके शूटर सलीम हड्डी, राजेश चंद्र, प्रकाश राय, पिंटू मिश्र, हरेंद्र उपाध्याय, सुजीत सिंह, बबलू पंडित, इश्तियाक और बबलू सादिक पुलिस की नाक में दम करने लगे। गिरोह ने अपहरण गुंडा टैक्स एवं सुपारी पर हत्याएं करने के अलावा हवाला कारोबार की भी शुरुआत की। नये गिरोह के जरिये अबू सलेम ने कानपुर के अशोक मसाला मालिक का अपहरण करवाकर उन्हें आजमगढ़ के बदरका मोहल्ले में रखा। भारी फिरौती की मांग की गई लेकिन स्पेशल टास्क फोर्स ने तीन लोगों को गिरफ्तार कर अपहरण व्यक्ति को बदरका से मुक्त करा दिया।

पूर्वी उत्तर प्रदेश में रेशम, कोयला और कालीन उद्योग का सालाना कारोबार दस हजार करोड़ रुपये से भी ज्यादा का है। इसी पर रंगदारी के कब्जे को लेकर गैंगवार होती है।

अबू सलेम के शूटरों ने सिर्फ आजमगढ़ में ही नहीं वरन् पूरे पूर्वांचल में अपना नेटवर्क बना लिया। इन शूटरों ने कई बार मुंबई की सड़कों पर दिनदहाड़े हत्याएं की और वापस आकर आजमगढ़ में छुप गये। इन शूटरों के पास असलहों और पैसों की कमी नहीं थी। इन्हें सबकुछ दाऊद एवं सलेम के नेटवर्क से हासिल हो रहा था। फिर भी काबिलियत की बदौलत विदेश में जाकर स्थापित होने की ललक इन शूटरों में थी। इसी दौरान अयोध्या में एक आतंकी इमरान एसटीएफ से हुई मुठभेड़ में मारा गया। यह आजमगढ़ का मूल निवासी नहीं था, पर कोट मोहल्ले में लम्बे समय से रह रहा था। पैसे के दम पर सलेम ने इमरान का पासपोर्ट और ड्राइविंग लाइसेंस आजमगढ़ के पते पर बनवा दिया था। इमरान बड़ी घटना कर विदेश भागने की फिराक में था। मामले का खुलासा होने के बाद काफी हो–हल्ला हुआ लेकिन फर्जी पासपोर्ट बनाने के आरोप में

एलआईयू के एक कर्मचारी को निलंबित कर मामला शांत करा दिया गया।

अन्डरवर्ल्ड मे अबू के पैर जमने के बाद उसके सगे भाई ने लखनऊ के आशियाना में ठिकाना बनाया। फिर एक गुटखा कम्पनी की डीलरशिप हासिल की। एक मोटर एजेंसी भी उसने खोली। आजमगढ़ के निवासी सादिक, सीपी राय और इश्तियाक वसूली में जुट गये, हालांकि बाद में उन्हें नयी दिल्ली पुलिस ने एक व्यापारी से अवैध वसूली के आरोप में गिरफ्तार किया। गुर्गों की 'हिफाजत' के लिए अबू सलेम का कारोबार संचालित करनेवालों ने राजनेताओं और नौकरशाहों का गहरा गठजोड़ तैयार कर लिया। फिर उसके गुर्गों ने दाऊद के लिए बेनामी सम्पत्तियां खरीदने का कारोबार शुरू किया। 13 नवंबर, 1997 को आजमगढ़ के देवगांव में हवाला कारोबारी नबी सरवर की दाऊद के भाई के इशारे पर हत्या कर दी गयी। इस मामले में नबी के घरवालों ने नसीरूद्दीन को मुख्य आरोपी बनाया। जांच के दौरान पुलिस को पता चला कि नसीरूद्दीन ब्रुनेई पहुंच गया। हालांकि पुलिस ने इस मामले से जुड़े हवाला के 55 लाख रुपये बरामद कर लिये।

बिहार के माफियाओं ने उत्तर प्रदेश के माफियाओं से गठजोड़ बना लिया है। अब बिहार से असलहे भी आते हैं और जरूरत पड़ने पर शूटर भी।

आजमगढ़ को पूरी तरह अंडरवर्ल्ड के शिकंजे में कसने के बाद अबू सलेम ने कद बढ़ाने की चाह में यहीं के शूटरों से कैसेट किंग गुलशन कुमार की हत्या करा दी। इस घटना से दाऊद भी हतप्रभ रह गया। मामला तब खुला, जब गुलशन कुमार की हत्या में प्रयुक्त असलहे पर 'मेड इन बम्हौर' लिखा पाया गया। काफी माथापच्ची के बाद मुंबई पुलिस जब इस स्थान तक पहुंची तो वह आजमगढ़ के मुबारकपुर थाना क्षेत्र का कस्बा बम्हौर निकला। यहां बड़े पैमाने पर अवैध असलहे तैयार किये जाते थे। इसका खुलासा होने के बाद अबू पुलिस की निगाह में चढ़ गया। पुलिस उसकी पूरे देश में तलाश करने लगी, जान बचाने के लिए वह विदेश भाग गया। गुलशन कुमार की हत्या से नाराज दाऊद ने विदेश में रहते हुए अबू सलेम को तलब किया। अबू सलेम ने यहीं से अपना नया गिरोह तैयार कर लिया। खाड़ी देशों में रहनेवाले सरायमीर के तकरीबन 900 लोगों में अपनी पैठ बनाकर उसने आजमगढ़ से अपना संबंध कायम रखा।

सलेम ने ही अपराध जगत को सबसे सस्ता 'शूटर' भी मुहैया कराया। दूसरी ओर, सलेम के तार जौनपुर से भी जुड़े रहे। सिने तारिका मनीषा कोइराला के सचिव अजीत

देवानी की हत्या के आरोपित कुख्यात शूटर बल्लू यादव से भी उसके रिश्ते थे। सलेम के इशारे पर ही अजीत की हत्या हुई थी। बल्लू ने पूर्वांचल में कई हत्याएं कर सनसनी मचा दी थी। मुंबई पुलिस को उसकी तलाश थी, लेकिन 20 हजार के इनामी बल्लू को संत रविदासनगर में हुई मुठभेड़ में पुलिस ने मार गिराया। सलेम ने पूर्वांचल के सैकड़ों बेरोजगारों को अपराध के दलदल में धकेला। रोबीली आवाज और प्रभावशाली व्यक्तित्व वाला अबू सलेम वास्तव में पैसे के लिए कुछ भी कर सकता था। अंडरवर्ल्ड सरगना दाऊद इब्राहिम से जुड़ने के बाद उसने कभी पीछे मुड़कर नहीं देखा। सलेम ने पैसा इकट्ठा करने के लिए बॉलीवुड को जमकर निचोड़ा। अपराध की दुनिया में कदम रखते ही उसे अहसास हो गया था कि वास्तव में बॉलीवुड के स्टार' ही उसे मालामाल करने के लिए काफी हैं। 'डी कंपनी' से उसे दाऊद के छोटे भाई अनीस इब्राहीम ने जोड़ा। सुनकर यह आश्चर्य होगा कि बॉलीवुड के 40 फीसदी शीर्ष अभिनेता, अभिनेत्रियों, निर्माता–निर्देशकों ने सलेम को जमकर पैसों से तौला, लेकिन किसी ने भी इसकी सूचना पुलिस को नहीं दी। सलेम के बेमिसाल पार्टियों की शान बनने और 'ट्रीट' उड़ाने वालों की फेहरिस्त लंबी है, लेकिन कुछ प्रमुख हस्तियों में राजीव राय, राकेश रोशन, मनीषा कोइराला, मनमोहन शेट्टी, आमिर खान और झामू सुगंध के नाम उल्लेखनीय हैं। इनमें से कई अभिनेत्रियों

इटली से आया है 'माफिया'

○ सामान्यतया गिरोहबंद अपराध में संलग्न लोगों के एक बड़े समूह को माफिया कहा जाता है। मूलतः 'माफिया' इटैलियन भाषा का शब्द है। इसकी उत्पत्ति 'माफियासो' से हुई है, जिसका मतलब खूबसूरत, निर्भीक या आत्मविश्वासी होता है। उन्नीसवीं सदी में सबसे पहले इटली के सिसली इलाके में माफिया शब्द लोकप्रिय हुआ। उन्नीसवीं सदी की शुरुआत में माफिया उन्हें कहा गया जो इटली में पलर्मो इलाके के आस–पास संतरे और नींबू के बागों के मालिकों की सुरक्षा का जिम्मा लेते थे। धीरे–धीरे इनका दायरा बढ़ा और माफियाओं ने सिसली के भूमालिकों और राजनीतिज्ञों की सुरक्षा का जिम्मा लेना शुरू कर दिया। फिर ये माफिया नेताओं के जरिए सरकार से बेहतर संबंध स्थापित कर काफी मजबूत हो गये। अमेरिका में यह शब्द बीसवीं सदी के मध्य में लोकप्रिय हुआ। अमेरिका में सबसे पहले शिकागो शहर में माफिया शक्तिशाली बने और फिर उन्होंने न्यूयार्क तक अपनी ताकत का विस्तार किया। आजकल भी इटली और अमेरिका के माफिया ही सबसे ज़्यादा शक्तिशाली आपराधिक संगठन हैं।

ने 'भाई' (दाऊद) से विदेश जाकर मुलाकात भी की।

बॉलीवुड में नवप्रवेशी हीरो–हीरोइनों के लिए सलेम 'सबकुछ' था क्योंकि नये और पुराने सभी कलाकार आला दर्जे के निर्माता–निर्देशकों की फिल्मों में रोल पाने को लालयित रहते थे और सलेम की बात कोई टालता नही था। सलेम ने अंधेरी वेस्ट में कुछ दिनों तक जाली पासपोर्ट का धंधा भी किया। उसी के कुछ दिनों बाद सलेम के संपर्क में मोनिका बेदी आयी, जिसे कुछ फिल्मों में 'लीड' भूमिकाओं की आस थी। मोनिका की नजदीकी पाकर सलेम और मजबूत हो गया क्योंकि वह उसे बॉलीवुड के अंतरंग रहस्यों को समझाती थी। इसी क्रम में मोनिका ने सलेम के जरिये मुकेश दुग्गल की फिल्म में मुख्य भूमिका अदा करने के लिए भी संपर्क साधा था। एक अनुमान के मुताबिक सलेम ने हर साल करीब 300 करोड़ से ज्यादा रुपये इधर से उधर किये। वर्ष 2001 में एक्शन हीरो अजय देवगन भी सलेम की चपेट में आये। वर्ष 2002 में अजीत देवानी की हत्या के बाद पुलिस की नजरें सलेम पर टिकी कि वह कैसे बॉलीवुड को खंगाल रहा है। फिर वर्ष 2002 में ही सलेम की चपेट में प्रोड्यूसर भारत भाई शाह आये। अंडरवर्ल्ड ने दावा किया कि फिल्म देवदास में उसका 48 करोड़ रुपया लगा है।

कौन–कौन होते हैं इटली के माफिया गैंग में

(1) कापो डि टुट्टि कापि– सरगनाओं का सरगना

(2) कापो डि कापि रे– वह वरिष्ठ सदस्य या पूर्व सरगना, जो बूढ़ा हो गया है लेकिन गिरोह में सबसे सम्मानित है।

(3) कापो क्रिमिनि– डॉन, सरगना या अपराधी समूह का प्रमुख।

(4) कापो बस्तोने–सरगना के बाद सबसे प्रमुख व्यक्ति या गिरोह में नम्बर– दो।

(5) कान्सिग्लिएरे– सलाहकार।

(6) कोंटाबाइल– आर्थिक सलाहकार।

(7) कापरेजाइम या कापोडेसिना– आपराधिक संगठन के किसी हिस्से या दल का नेतृत्वकर्ता।

(8) गरिस्टा या सोल्डटि– आपराधिक संगठन का सदस्य।

(9) पिसिओट्टो– आपराधिक संगठन का निम्नस्तरीय सदस्य।

(10) गिओवाने डि ओनेरे– आपराधिक संगठन से संबंधित व्यक्ति।

बॉलीवुड की लकदक और हिरोइनों से निकटता के चलते सलेम को अब लगने लगा है कि वह कुछ अपना भी 'लुक' बदले। कहा जाता है कि वर्ष 2001 में इसके लिए एक प्रमुख अभिनेता केन्या गया और वहां से कुछ स्टेरायड और शरीर की मांसपेशियां उभारने वाली दवाएं लेकर लौटा। यह व्यवस्था बांद्रा के एक बड़े जिम में की गयी। केवल 20 दिनों बाद ही चमत्कार हो गया और सलेम अब 'स्मार्ट मैन' की भूमिका में सबके सामने था– दाढ़ी गायब, कैप लगाये, महंगा चश्मा पहने।

कैसेट किंग गुलशन कुमार की हत्या के आरोप में नाम आने के बाद वर्ष 2002 तक सलेम के आतंक का साम्राज्य परवान पर था। फिल्मी हस्तियों के कई शो सलेम ने विदेशों में आयोजित किये, जिनमें पैसा बरसा। जांचकर्ताओं ने पाया कि हवाला के जरिए कारोबार करनेवालों के संपर्क भी सलेम से रहे। यूरोप और अमेरिका में जिन संगीत समूहों ने अपनी भागीदारी की, उन्होंने 20 लाख रुपये अदा किये। सलेम को हमेशा मशहूर होने की ख़्वाहिश थी और वह अपने को 'डॉन' कहलाना पसंद करता था। वह अक्सर बालीवुड सितारों के स्टेज शो में जाता था और फिल्मी सितारों से मिलता था। वहां से लौट कर वह कहता था 'मैं भी इन फिल्मी सितारों की तरह शोहरत और लोगों का प्यार हासिल करना चाहता हूं।'

अपराधियों के पास ए.के.–47 रायफलों की संख्या बढ़ तो रही है लेकिन बरामदगी नही हो पा रही है। वाराणसी में गुड्डू आरंगी से मुठभेड़ के दौरान दो ए.के.–47 रायफल मिली। राजा भैया के घर पर छापे में कलाश्निकोव रायफल की बरामदगी दिखाई गयी। ए.के. रायफलों की बरामदगी के यही चन्द उदाहरण हैं। पिछले दिनों जो खबरें सुनने में आयी उससे लगता है कि वारदातों के लिए माफिया सरगना ए.के.–47 किराये पर भी दे रहे हैं।

ज़ाहिर है जिस पूर्वांचल पर अपराध के इतने बड़े–बड़े सूरमा नज़र गड़ाये हों, वहां असलहों की कमी तो हो ही नही सकती। दरअसल पूर्वांचल के माफिया गिरोह ही हथियारों को लेकर सबसे मजबूत रहे हैं। इन गिरोहों के पास 9 एमएम से लेकर कारबाइन, एके–47, 56 जैसे हथियार बीती सदी के 80 के दशक से हैं। इन गैंगों को असलहों की आपूर्ति बिहार, नेपाल और पूर्वोत्तर राज्यों में फैले असंतुष्ट गुटों से होती रही है। पंजाब में आतंक के खात्मे के साथ ही माफियाओं

इलाहाबाद में विधानसभा उपचुनाव में राजू पाल ने अतीक अहमद के भाई मुहम्मद अशरफ को पटखनी दे दी थी, तभी से दोनों में गैंगवार तल्ख हो गयी थी। बाद में राजू पाल की हत्या हो गयी।

और उनके गुटों के वहां से हथियार जुटाने की भी चर्चा है। राज्य में सक्रिय 20 से ज्यादा बड़े आपराधिक गिरोहों के पास एके–47 रायफलें हैं। सबसे अधिक मुन्ना बजरंगी और बृजेश सिंह के गिरोह के सदस्यों के पास एके रायफले हैं। मुन्ना बजरंगी तो हर समय इस हथियार को साथ लेकर चलता है। जबकि फैजाबाद, गोरखपुर, जौनपुर, गाजीपुर, मेरठ, गाजियाबाद, प्रतापगढ़, इलाहाबाद, रायबरेली, कानपुर में अपराध की दुनिया में दबदबा रखनेवाले आपराधिक गिरोह के पास भी यह खतरनाक 'हथियार' है। यह हथियार नेपाल और बांग्लादेश के रास्ते राज्य में बड़े अपराधियों के जखीरे में पहुंचे हैं। राज्य में सक्रिय अपराधियों के बारे में तैयार की गयी एक रिपोर्ट में ऐसी जानकारी दी गयी है।

भाजपा विधायक कृष्णानंद राय की हत्या और उसके बाद संत ज्ञानेश्वर स्वामी सदानन्द की हत्या में कई एके–47 रायफलों का इस्तेमाल हुआ। तब पुलिस अफसरों का ध्यान अपराधियों की फायर पॉवर की ओर गया। यह पता लगाने का फैसला किया गया कि किस सूचीबद्ध गिरोह के पास कितनी ऐसी रायफलें हैं और राज्य में ये कहां से आ रही हैं। क्या कश्मीर के आतंकी इन्हें यहां पहुंचा रहे हैं या फिर आईएसआई के जरिये राज्य में इन्हें लाया जा रहा है? एसटीएफ तथा सुरक्षा महकमे के अफसरों ने सभी जिलों के पुलिस कप्तानों के जरिये इस संबंध में सूचनाएं जुटायीं। जेल में बन्द शातिर अपराधियों से भी पूछताछ की गयी। पता चला है कि बेहद नियोजित तरीके से एके–47 रायफल राज्य में शातिर अपराधियों को उपलब्ध करायी जा रही हैं। वह भी मात्र कुछ लाख रुपये में। नेपाल और बांग्लादेश में सक्रिय आईएसआई के गुर्गे कीमत मिलने पर प्रदेश में ही ये हथियार को उपलब्ध करवा रहे हैं। इस नेटवर्क के जरिये बीते पांच सालों में बड़े आपराधिक गिरोहों के पास यह रायफल पहुंचायी गयीं। हर बड़े गिरोह का मुखिया इस रायफल का दीवाना हो रहा है, चाहे मुन्ना बजरंगी हो या बृजेश सिंह के साथी। सबके सब इस रायफल के भरोसे ही बड़ी से बड़ी आपराधिक घटना को अंजाम देने में जुटे हैं। अगर भाजपा विधायक कृष्णानंद राय की हत्या की बात करें तो उन पर हमले में एक–एक लाश के हिस्से एक–एक एके–47 और कम से कम पचास गोलियां आयीं। अखबार लिखते हैं कि गाजीपुर के सुदूर देहात में भाजपा विधायक कृष्णानंद राय सहित सात लोगों

उत्तर प्रदेश में माफिया

◆ उच्च न्यायालय की लखनऊ खण्डपीठ में चंद्रिका प्रसाद निषाद और भोलानाथ निषाद की दायर याचिकाओं की सुनवाई कर रही न्यायमूर्ति डी.पी. सिंह की एकल पीठ ने माफिया की परिभाषा जानने के लिए प्रमुख सचिव कार्यक्रम एवं क्रियान्वयन जी.बी. पटनायक की अध्यक्षता वाली एक सदस्यीय समिति गठित करने का आदेश दिया था। इस समिति ने 26 अप्रैल 2006 को अपनी रिपोर्ट अदालत के सामने पेश की। रिपोर्ट में कहा गया है कि माफिया एक ऐसा प्रभावशाली व्यक्ति है, जो संयुक्त रूप से हिंसा और अनुचित दबाव डालकर गैरकानूनी तरीके से पैसा कमाने में लगा रहता है। रिपोर्ट में कहा गया कि समाज में करीब दो दर्जन तरह के माफिया हैं। इनमें भी 8 श्रेणियां प्रमुख हैं। इन प्रमुख श्रेणियों में अपराध माफिया, धन माफिया, शिक्षा माफिया, भूमाफिया, खेल माफिया, खनन माफिया, धार्मिक माफिया और नारकोटिक्स माफिया हैं। रिपोर्ट के मुताबिक जमींदारी विनाश और रोज़गार के अभाव में शहर आनेवाली ऊंची जाति के लोगों के पास कोई काम नही था। ऐसे लोग मोटे मुनाफे वाले कामों मसलन पत्थर खनन, सरकारी ठेका, टिम्बर व्यापार, अचल सम्पत्ति, व्यवसाय और शराब ठेकों की ओर उन्मुख हुए। प्रतिस्पर्धा के कारण जातीय आधार पर गुट पनपे। टकराव ने हिंसा और बदले की भावना को जन्म दिया। प्रभुत्व जमाने के लिए दूसरे गुट के सदस्यों का अपहरण और हत्या जैसी घटनाएं आम हो गयीं। धन और बाहुबल के ➔

➔

जोर पर अपराधियों ने शान्तिप्रिय और कानून का पालन करनेवाले व्यापारियों–ठेकेदारों को धंधे से बाहर कर दिया। ऐसे लोगों ने धर्म, जाति और वर्ग विशेष के सहयोग से राजनीति में प्रेशर ग्रुप बना लिया। राजनीतिक पार्टियां भी इनका चुनाव में इस्तेमाल करने लगी। धीरे–धीरे यही लोग राजनीति में आ गये। यह वही समय था जब माफिया शब्द का चलन हुआ। इस रिपोर्ट से पहले भी 1993 में तत्कालीन पुलिस महानिदेशक प्रकाश सिंह ने ऐसे माफिया समूहों के खिलाफ पुलिस को कड़ी कारवाई के आदेश दिये थे। डी.जी.पी. के उस सर्कुलर के मुताबिक माफिया का मतलब अपराधियों के उस संगठन से है, जो राज्य के भीतर शासन और प्रशासन के समानान्तर सरकार चलाते हैं और अपने विभिन्न आपराधिक कृत्यों से ख़ौफ और आतंक का वातावरण पैदा कर देते हैं।

रिपोर्ट में कहा गया है कि भारत के सम्बन्ध में संगठित अपराध की धारणा बीसवीं सदी के सातवें दशक में महाराष्ट्र और गुजरात शराबबंदी के दौरान पनपी। सोने पर नियंत्रण ने महाराष्ट्र और गुजरात के समुद्री तटबन्धों पर सोने और मादक पदार्थों की तस्करी के अपराध को बढ़ावा दिया। बाद में यह बहुत ही तेजी से अचल सम्पत्ति के व्यवसाय और फिल्म कारोबार में फैल गया। माफियाओं ने धार्मिक और सांस्कृतिक कार्यक्रमों में चंदा देकर जनता की हमदर्दी हासिल की। राजनीतिज्ञों की शरण मिलने के चलते राजनीति औरं अपराध में गठजोड़ बना। ◆

की हत्या की सनसनीखेज वारदात में एक–दो–तीन नही बल्कि पूरी की पूरी सात एके–47 रायफलें इस्तेमाल की गयी थीं। एक नाइन एमएम पिस्तौल भी चली और कम से कम साढ़े चार सौ फायर हुए। इसी तरह इलाहाबाद के हंडिया इलाके में संत ज्ञानेश्वर स्वामी सदानन्द की हत्या में कई एके–47 रायफलों का इस्तेमाल हुआ।

पंजाब, पूर्वोत्तर और जम्मू–कश्मीर की आतंकी वारदातों को छोड़ दें तो देश में आजतक किसी भी आपराधिक वारदात में इतनी संख्या में एके 47 या 56 रायफलों को एक साथ इस्तेमाल कभी नहीं हुआ था। देश में अंडरवर्ल्ड के अघोषित मुख्यालय के रूप में चर्चित रही मुम्बई में भी कभी किसी अपराध में इस तरह के असलहों का ऐसा प्रयोग नहीं किया गया। जानकारों के मुताबिक बिहार जैसे अपराध बहुल प्रदेश में सिर्फ एक ऐसी वारदात हुई है, जिसमें दो एके–47 रायफलों का इस्तेमाल किया गया था। कुख्यात माफिया सरगना और पूर्व विधायक राजन तिवारी के मामा बृजकिशोर दुबे की हत्या के लिए बिहार के पूर्व मंत्री बृजबिहारी प्रसाद पर भाड़े के हत्यारों से यह वारदात कराने का इल्जाम था। बाद में उनकी भी हत्या कर दी गयी। कृष्णानंद सहित सात लोगों की हत्या में शामिल रहे गिरोह के कब्जे में कम से कम एक दर्जन एसाल्ट रायफलें और पचासों अन्य अत्याधुनिक असलहे हैं, जो देश के किसी भी हिस्से में बड़ी से बड़ी वारदात कर सकते हैं। ऐसे में किसी की भी जान सुरक्षित नही है और फिर जिनकी बड़े माफियाओं से दुश्मनी है, उनकी जान तो कड़ी सुरक्षा के बावजूद सुरक्षित नही कही जा सकती।

अजीत सिंह को चाल, चरित्र और चेहरे की बात करने वाली भाजपा ने एम.एल.सी बनाया तो उसके बाद सपा ने हाथोहाथ लिया। वह दुबारा सपा के एम.एल.सी बने थे।

जैसे–जैसे उत्तर प्रदेश विधानसभा में अपराधिक छवि वाले विधायकों की संख्या बढ़ रही है, वैसे–वैसे इन बाहुबलियों की बीच रंजिश परवान चढ़ रही है। अपने–अपने क्षेत्र के बड़े–बड़े बाहुबली सूरमाओं को ठिकाने लगाने की कोशिशें जारी हैं। बाहुबली बहादुर अपने इलाके में एकछत्र राज्य कायम करने में कोई कोरकसर नही छोड़ना चाहते। इलाहाबाद में अतीक अहमद और राजू पाल की अदावत किसी से छुपी नहीं थी। अंततः एक दिन राजू पाल की हत्या हो गयी। राजू पाल की हत्या से अगर किसी की ताकत का ग्राफ ऊपर चढ़ा तो वह थे अतीक अहमद। इलाहाबाद के शहर पश्चिमी विधानसभा क्षेत्र से 1989 से विधायक रहे अतीक अहमद फूलपुर संसदीय क्षेत्र से सांसद निर्वाचित

हो गये। यह वही फूलपुर सीट है, जहां से पंडित जवाहरलाल नेहरू संसद के लिए चुने जाते थे। फूलपुर से अतीक अहमद के सांसद चुने जाने के बाद उनकी इलाहाबाद की शहर पश्चिम सीट खाली हो गयी। विधानसभा उपचुनाव में अतीक ने यहां से अपने भाई मुहम्मद अशरफ को समाजवादी पार्टी के टिकट पर चुनाव में उतारा। अतीक अहमद के भाई का चुनाव में जीतना तय माना जा रहा था, पर जीत दर्ज की राजू पाल ने। राजू पाल ने अशरफ को चार हजार मतों से शिकस्त दी। 15 साल बाद इस क्षेत्र का राजनीतिक इतिहास बदला। साथ ही बदला इलाके के सिरमौर बनने का सिलसिला। जीत के साथ राजू पाल का जलवा कायम हुआ तो दूसरे गुट को नागवार गुजरा।

बबलू की मोडस ऑपरेंडी में नये लड़कों के लिए काफी जगह रहती है। कई बार तो उन्हें यह पता भी नहीं होता कि वारदात का मास्टर माइंड कौन है।

इस गहराती रंजिश से यह लगने लगा था कि कोई न कोई एक न एक दिन ठिकाने लगा दिया जायेगा। लेकिन सड़कों पर कब और किसका खून बहेगा, इसका अंदाजा किसी को नहीं था। खैर, 29 दिसम्बर 2004 को शाम 4:30 बजे जब राजू पाल अपने घर जा रहे थे तो रास्ते में घात लगाये हमलावरों ने उनकी कार को निशाना बनाया। गोलियां बरसीं तो राजू पाल के दो साथी गोली लगने से घायल हो गये लेकिन राजू पाल हमले में बाल–बाल बच गये। राजू पाल की तरफ से भी फायरिंग हुई, जिसमें एक हमलावर राजू पासी के पैर में गोली लगी। इससे पहले भी विधायक बनने के बाद राजू पाल पर गोलियों–बमों से हमला हुआ था, इसमें भी पाल की जान बच गयी थी। वैसे शरीफ होने का तमगा राजू पाल के खाते में भी नहीं था, पाल पर कई जघन्य अपराधिक मामले दर्ज थे।

इन हमलों के साथ अतीक और राजू पाल की राजनीतिक गैंगवार अपने गंभीर मुकाम की ओर बढ़ रही थी। 2005 में देश के गणतंत्र दिवस से एक दिन पहले यानी 25 जनवरी को राजू पाल की हत्या कर दी गयी। बहुजन समाज पार्टी के इस विधायक की हत्या के साथ शहर में हिंसा हुई और राजनीतिक पारा भी ऊपर चढ़ा। बहुजन समाज पार्टी और समाजवादी पार्टी ने एक दूसरे पर आरोप जड़े। हत्या के नाम पर 'पॉलिटिकल गेन' हासिल करने की कोशिश की गयी। इस मामले में अतीक के भाई मुहम्मद अशरफ को गिरफ्तार कर लिया और उसके साथ ही फरहान, रंजीत भी गिरफ्तार हुए। गिरफ्तार फरहान का कहना था कि राजू पाल ने पैसे लेकर उसके पिता अनीस पहलवान की हत्या

की थी, जिसका बदला उसने लिया।

राजनीति में बाहुबलियों की दबंगई के इस दौर में अतीक अहमद का नाम बड़े सम्मान के साथ लिया जाता है। अपराध की दुनिया से राजनीति तक का सफर करनेवाले इस बाहुबली सांसद के नाम सिर्फ हत्या के ही छह मामले हैं। अपनी ताकत के बलबूते दूसरों पर भारी पड़ने वाले अतीक पहली बार वर्ष 1989 में विधायक बने। वर्ष 1984 में उनके खिलाफ धारा 304 का एक मामला खुल्दाबाद थाने में दर्ज हुआ था। 25 जनवरी, 2005 को बसपा विधायक राजू पाल की हत्या सहित उन पर तकरीबन 162 मामले दर्ज हैं। 117 मुकदमे तत्कालीन एसपी सिटी ने एक ही दिन में विभिन्न थानों में दर्ज कराये थे। अब तक इसमें से तमाम मुकदमे खत्म भी हो चुके हैं। सांसद के छोटे भाई और इलाहाबाद पश्चिम से समाजवादी पार्टी के विधायक अशरफ पर वर्तमान में बसपा विधायक राजू पाल की हत्या के मामले के अलावा कई अन्य अपराधिक मामले है। अशरफ के खिलाफ 25 से ज्यादा मुकदमे दर्ज हैं।

जब माफियाओं को यह पता चल जाये कि अपने राजनीतिक विरोधी को ठिकाने लगा कर वह संसद या विधानसभा का रास्ता तय कर सकते हैं तो उन्हें अपने प्रतिद्वंद्वियों के साथ कुछ भी करने में हिचक नही है। जब भी मौका मिले अपने दुश्मनों को निपटाना माफियाओं की रणनीति का एक हिस्सा रहा है। जिस भी माफिया के अंदर राजनीतिक चाह पैदा हुई, उसने अपने इलाके से लेकर राजधानी लखनऊ तक खुद को स्थापित करने की कोशिश की। इसलिए यह स्वाभाविक ही है जब किसी बाहुबली के दिल में राजनीति में झंडे गाड़ने का दिल आया, उसने सबसे पहले अपना रुख़ लखनऊ की तरफ किया। यहां ठेके–पट्टे में आगे रहने की दूसरों से होड़ की, खूनी खेल खेला और अपने जलजले को बढ़ाने की कोशिश की। इस खेल में कोई दोस्त बना तो कोई दुश्मन। गोलियां चली, मौतें भी हुईं लेकिन विधान परिषद सदस्य अजीत सिंह की मौत की वजह पर रहस्य का पर्दा पड़ा ही रहा। 4 सितम्बर को पैदा हुए अजीत सिंह की मौत भी 4 सितम्बर को हुई। सन् 2004 में उन्नाव स्थित अपने आवास पर वह अपने ही सुरक्षाकर्मी की गोली का शिकार हुए। लेकिन अजीत

बबलू श्रीवास्तव ने अपने कुख्यात तौरतरीकों से जिस तरह से लखनऊ और विश्वविद्यालय का नाम 'विख्यात' किया, उस तरह की प्रसिद्धी न तो दुबारा शहर चाहेगा और न ही लखनऊ विश्वविद्यालय।

सिंह की मौत एक हादसा है, इसे न तो अंडरवर्ल्ड मानता है, न पुलिस और न ही मीडिया।

मौत से दो साल पहले अजीत सिंह का झगड़ा पूर्वांचल के माफिया सरगना से विधायक बने मुख्तार अंसारी से हुआ था। इसके बाद एक अन्य बाहुबली ने अपने घर में पंचायत बुलाकर दोनों में सुलह करायी थी लेकिन ये समझौता ज्यादा दिन नहीं चला। समाजवादी पार्टी का होने के बावजूद अजीत सिंह और मुख्तार अंसारी की शत्रुता गहराने लगी थी। अपना प्रभाव रायबरेली तक बढ़ाने की कोशिश में अजीत सिंह की दुश्मनी बाहुबली राजनेता अखिलेश सिंह से भी हो गयी थी। बढ़ते दुश्मनों के साथ अजीत सिंह ने अपनी सुरक्षा बढ़ा ली थी और शरीर पर बुलेटप्रूफ जैकेट भी चढ़ा लिया था। लेकिन मौत उसके घर पर ही उतरेगी और अपने ही सुरक्षाकर्मी के जरिये, ये शायद किसी ने नहीं सोचा था। अजीत सिंह की मौत हत्या थी या हादसा इसका जवाब अभी तक नहीं तलाशा जा सका है।

बबलू श्रीवास्तव के अपहरण के शातिर तौरतरीकों से पुलिस भी दांतों तले उंगली दबा लेती थी। उसने मुम्बई से लेकर कोलकाता तक और दिल्ली से लेकर दक्षिण भारत तक अपहरण किये और फिरौती वसूली।

लखनऊ के चारबाग स्टेशन से खलासी के रूप में शुरुआत करने वाले अजीत सिंह ने दस सालों के अंदर करोड़ों रूपये का साम्राज्य खड़ा कर लिया था। महत्वाकांक्षा ने उसे बदनुमा ऊंचाइयां दीं। अपहरण, फिरौती, हत्या, जमीन हड़पने जैसे मामलों में चर्चित होने के बाद उसके नाम से लखनऊ थर्राने लगा था। बाबू बख्शी और सुभाष भंडारी की मौत के बाद अजीत सिंह लखनऊ के बेताज बादशाह बन गये। लखनऊ पुलिस के रिकार्ड में उनका नाम हिस्ट्रीशीटर के रूप में दर्ज हो गया। इसके बाद राजनीति में मुकाम हासिल करना अजीत सिंह के लिए कठिन नहीं था। वह 1998 में चाल, चरित्र और चेहरे की बात करने वाली भारतीय जनता पार्टी के विधान परिषद सदस्य बन गये। समाजवादी पार्टी ने भी उन्हे हाथोंहाथ लिया। जब उनकी मौत हुई तो अजीत सिंह समाजवादी पार्टी के विधायक थे।

यह नज़र आने लगा है कि सत्ता हासिल करने के लिए राजनीतिक दल हर तरह से तैयार हैं। मौका पड़ने पर कभी किसी दागी के विरोध में खड़े हो जाते हैं और कभी पक्ष में। उत्तर प्रदेश की राजनीति में कायम सामंतशाही व्यवस्था ने जिसे सबसे ज्यादा ऊंचाइयां दीं, अगर ये चर्चा हो तो रघुराज प्रताप सिंह उर्फ राजा भैया का नाम बड़े अदब

के साथ लिया जा सकता था। राजा भैया का हत्या और अपहरण जैसे संगीन अपराधों के साथ ढेरों मामलों में नाम आया लेकिन जातिवादी राजनीति में उनके गलत कामों को नजरअंदाज करते हुए उन्हें एक ख़ास समुदाय को प्रतीक बताया गया। उन्हें केवल राजनीतिक संरक्षण ही नहीं मिला बल्कि वह कई बार मंत्री भी रहे। कभी सियासतदानों ने उन्हें 'कुण्डा का गुण्डा' कहा था लेकिन राजनीति का कमाल देखिये, वह भाजपा नेतृत्व वाली कल्याण सिंह सरकार में मंत्री भी रहे। जब मायावती ने अपने मुख्यमंत्रित्व काल में उन्हें जेल का रास्ता दिखाया था तो उनके लिए 'जेल के ताले टूटेंगे, राजा भैया छूटेंगे' के नारे पूरे प्रदेश में लगाये गये।

भदरी रियासत के युवा उत्तराधिकारी और निर्दलीय विधायक राजा भैया को उनके इलाके में बड़े सम्मान की नजरों से देखा जाता है। कहते हैं बिना राजा भैया के इशारे के उस इलाके में पत्ता भी नही हिलता। उनके दुश्मनों का कहना है कि ये सब राजा भैया के डर की वजह से है। लेकिन खुद राजा भैया अगर कुछ भुलाना चाहेंगे तो वो हैं मायावती के अत्याचार। अपने तेवर के लिए पहचानी जाने वाली मायावती और अपने ठाठ के लिए पहचाने जाने वाले राजा भैया के संबंधों में तल्खी आनी तब शुरू हुई, जब नवम्बर 2002 में इस ताकतवर राजपूत नेता ने तत्कालीन मायावती सरकार के खिलाफ बगावत का झंडा बुलन्द किया। जवाबी कार्रवाई भी हुई, उनके खिलाफ गैंगस्टर एक्ट और पोटा के अन्तर्गत कई आपराधिक मुकदमे दायर कर दिये गये। मायावती ने अपनी हत्या की कथित साजिश के आरोप में राजा भैया और उनके सत्तर साल के बुजुर्ग पिता उदय प्रताप सिंह को गिरफ्तार करवा दिया। जिस भारतीय जनता पार्टी ने राजा भैया को सिर–माथे बिठाया था, अपने मंत्रिमण्डल में जगह दी थी और चुनावों में मदद ली थी। उसी भाजपा में राजा भैया के खैरख्वाह नेताओं ने मायावती को समर्थन देने के बावजूद राजा भैया पर 'अत्याचार' के मामले पर चुप्पी साध ली। मौका दूसरी पार्टी को मिला राजा भैया पर हो रहे अत्याचार के खिलाफ समाजवादी पार्टी मुखर हो गयी। समाजवादी पार्टी की ओर से राजा भैया के समर्थन में एक आंदोलन छेड़ दिया गया। राजा भैया की रिहाई के लिए धरना–प्रदर्शन का सिलसिला लगातार चलता रहा। राजा भैया को क्षत्रिय समाज का प्रतीक बना दिया गया। समर्थन

अभय सिंह और धनंजय सिंह ने अपना साम्राज्य शुरूआती दौर में अपने लखनऊ विश्वविद्यालय के साथियों की मदद से खड़ा किया।

का सिलसिला तब थमा, जब समाजवादी पार्टी की सरकार आयी और फिर राजा भैया की रिहाई हुई। बाद में राजा भैया मुलायम सिंह यादव मंत्रिमंडल में शामिल हुए। राजा भैया को मायावती के दौर में आठ महीने जेल की तंग, अंधेरी और तनहा कोठरियों में दिन–रात काटने पड़े तो सपा सरकार के दौर में उन्होंने जेल में रहते हुए भी सुख भोगा।

यह आश्चर्य है कि मायावती के शासन के दौरान राजा भैया को जिस सख़्त तरीके से रखा गया, अगर उसे छोड़ दें तो बाहुबली राजनेता जेल तो अपराधिक मामले में जाते हैं लेकिन जेल उनके लिए किसी आरामगाह से कम नहीं है। इन्हीं की देखादेखी शुद्ध शातिर माफिया अपराधी जेल में मजा काटते हैं, ऐश से रहते हैं। हकीकत यह है कि उत्तर प्रदेश खासकर पूर्वांचल के जेल अपराधियों और माफिया सरगनाओं का स्वर्ग बने हुए हैं। अपराधी जेल से ही अपना आर्थिक साम्राज्य और आपराधिक गतिविधियां चलाते हैं। कई बार न्यूज़ चैनलों ने दिखाया, अखबारों ने छापा लेकिन जेल में दबंगों की मौजमस्ती में कोई कमी नही आयी। जेलों में दबंगों का जलवा कायम है। जेल के बहुत से कर्मचारी उनका काम करने में मदद करते हैं। वे संदेश पहुंचाने से लेकर अपहरण, जबरन वसूली और हत्या जैसे अपराधों को अंजाम देने में उनके गुर्गों की मदद करते हैं। जो चीजे सींखचों के बाहर आम आदमी को आसानी से नहीं मिल पाती, वो जेल के भीतर आसानी से उपलब्ध हो जाती हैं। मोबाइल और हथियारों से लेकर सब कुछ। मई 2005 में लखनऊ जेल में बन्द माफिया अतुल सिंह और डीआईजी (जेल) शेषमणि त्रिपाठी के बीच हुई बातचीत किसी से छुपी नहीं रही। कभी किसी बाहुबली राजनेता के जेल में जलसा करने की खबर आती है तो कोई बाहुबली जेल में ही दरबार लगाता है। जेल में रह कर शानोशौकत की जिंदगी बिताना कोई अचरज का विषय नहीं है।

श्रीप्रकाश शुक्ला के बारे में यह कहा जाता है कि उसके तत्कालीन भाजपा सरकार के तीन प्रभावशाली मंत्रियों से अच्छे रिश्ते थे।

जेल में रहकर ही अपराधी धमकियां देते हैं और फिरौती वसूल करते हैं। उत्तर प्रदेश में जब नब्बे के दशक में मोबाइल सेवा शुरू हुई तो मानो जैसे अपराधियों की लॉटरी निकल गयी। बताते हैं कि उस दौर में नैनी जेल में बंद बबलू श्रीवास्तव ने कई बड़े–बड़े अपहरण काण्ड को अंजाम दिया और करोड़ों की वसूली की। बबलू के पास मोबाइल बरामद होने के बाद पता चला कि ये अपराधियों के लिए जादू का उपकरण बन गया है। तभी सरकार ने जेलों में जैमर लगाने का फैसला किया लेकिन ये कितना कारगर

एक गौर करने वाला तथ्य यह है कि ज्यादातर वही कारोबारी माफिया सरगनाओं का शिकार बनते हैं, जो काला धन कमाते हैं या काला कारोबार करते हैं।

निकला, जगजाहिर है।

ये भी एक तल्ख सच्चाई है कि जिस जेल अधिकारी ने सख्ती की, उसे सजा भुगतनी पड़ी। सख्ती के चक्कर में ही लखनऊ जिला जेल के जेलर आर.के. तिवारी की हत्या हुई। जेलकर्मी शोभालाल निषाद और अशोक गौतम की भी हत्या हुई। हकीकत यह है कि ठाठ की जिंदगी जी रहे अपराधियों के लिए राह में रोड़ा बन रहे जेल कर्मचारियों और अफसरों की पिटाई करना बायें हाथ का खेल है। दिसम्बर 2004 को वाराणसी जिला जेल के जेलर ए.पी. राय की पिटाई अखबारों और न्यूज़ चैनलों की खबर बनी। पिटाई की वजह यह थी कि माफिया पप्पू भौकाली और उसके साथी गांजा तस्करी में बन्द एक व्यापारी से 5 लाख रुपये रंगदारी मांग रहे थे और रंगदारी देने में असमर्थता जताने पर उसे पीट रहे थे। राय ने बीचबचाव किया तो पप्पू भौकाली और उसके छह साथियों ने उनको भी पीट दिया। 2005 तक ऐसे हमलों में 500 से ज्यादा कर्मचारी पिट चुके हैं।

इतना ही नहीं अपराधी भी सुरक्षित नहीं हैं। वाराणसी की ही जेलों को ले तो वहां जेल के अंदर तीन अपराधियों की हत्या हो चुकी है। ...जब जेल में हथियार पहुंच जाये तो खूंखार अपराधियों के लिए गोली चलाना कोई कठिन काम नही है। वाराणसी की जेलों का तो इतिहास ही प्रभावशाली बंदियों की मनमानी से भरा है। यहां इन लोगों की मर्जी के खिलाफ एक पत्ता नहीं हिलता। 2 मार्च 2004 को जिला जेल के भीतर बन्द सभासद बंशी यादव की हत्या मुन्ना बजरंगी के गुर्गों ने फाटक के भीतर कर दी, तो 13 मई 2005 को सेंट्रल जेल में मुन्ना बजरंगी के खास अन्नू त्रिपाठी की हत्या हो गयी। जब जेल में हत्या हो सकती है तो कोर्ट–कचहरियों में निशाना बनाना कितना कठिन काम है। पूर्वी उत्तर प्रदेश में कोर्ट–कचहरियों में हमले के कई सच्चे किस्से मौजूद हैं। यह भी तथ्य है कि ज्यादातर मुख्तार खेमे के लोगों को ही पेशी के दौरान निशाना बनाया गया।

अगस्त 2005 में जब उत्तर प्रदेश में मायावती की सरकार थी, तब इलाहाबाद के न्यायालय में पेशी के दौरान सांसद अतीक अहमद पर हमला हुआ। इसके अलावा मुख्तार के करीबी समझे जाने वाले अन्नू त्रिपाठी पर भदोही जिले में उस समय हमला किया गया, जब वह इलाहाबाद से पेशी से वापस लौट रहा था। उस हमले में अन्नू तो बच गया लेकिन एक पुलिसकर्मी की मौत हो गयी और कई घायल हो गये। पुलिस अभिरक्षा में रहने

वालों पर बृजेश गैंग का हमला करने का नुस्खा बहुत पुराना है। चूंकि मुख्तार इन स्थितियों से वाकिफ है, इसलिए वह अपने सुरक्षा को लेकर कभी रिस्क नहीं उठना चाहता।

वैसे भी जब खूनी और खादी का करीबी रिश्ता कायम हो गया है, तो किसी की जान भी सुरक्षित नही हैं। 2003 से 2005 के बीच विधायक अजीत सिंह, राजू पाल और कृष्णानन्द राय की हत्या हुई। तीनों की माफियाओं से राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता थी। जरायम और सियासत के बीच चोली–दामन का जो रिश्ता फिलहाल सामने है, उसे देखकर दावा नहीं किया जा सकता कि राजनीतिक हस्तियों की मौत का सिलसिला थमेगा। ऐसा नहीं है कि सिर्फ इन तीन विधायकों की ही हत्या की गयी। कई अन्य राजनेताओं को भी अपनी जान से हाथ धोना पड़ा। नेताओं की हत्याओं से राज्य में अभी तक कोई सबक नहीं सीखा गया है। इसके चलते सदन में लगातार अपराधिक छवि वाले नेताओं की संख्या बढ़ रही है। गम्भीर बात यह है कि ऐसे नेताओं से दूरी बनाने की पहल कोई भी राजनीतिक दल नहीं कर रहा है। ऐसे में अपराधिक छवि के कई और नेताओं पर खतरा मंडरा रहा है।

राजा भैया को जहां मायावती के शासनकाल में आठ महीने जेल की तंग, तनहा और अंधेरी कोठरियों में काटने पड़े तो सपा सरकार में उन्होंने जेल में रहते हुए भी सुख भोगा।

अगर गौर कीजिए तो बाहुबलियों की जंग की एक खासियत नजर आती है और वह है सांप्रदायिकता। पता नहीं अपराधी अपनी काली करतूतों के लिए या फिर बाहुबली राजनेता वोटों की खातिर साम्प्रदायिकता फैला रहे हैं लेकिन ये साम्प्रदायिकता पूर्वांचल में अपनी जड़ें लगातार गहरी करती जा रही है। 2005 में हुए मऊ के दंगों ने ये साफ किया कि विधायक मुख्तार अंसारी एक खास सम्प्रदाय के पक्ष में खड़े नजर आये। लोगों का आरोप है कि मऊ में उस दौरान मुख्तार अंसारी का काफिला जिधर से गुजरा, उधर तनाव और गहराया। दंगे में जो लोग मारे गये, उनमें से ज्यादातर एक सम्प्रदाय के थे।

दूसरी ओर मारे गये विधायक कृष्णानन्द राय भी एक पक्ष के प्रतिनिधि भी समझे जाते थे। ये बात भी किसी से छुपी नहीं थी कि मुख्तार अंसारी को कृष्णानन्द राय का माथे पर तिलक लगा कर और मोटी चुटिया रख कर विरोधी खेमे का नेतृत्व करना रास नहीं आता था। कृष्णानन्द राय के साथ चलने वाले उनके खास लोगों की पहचान भी

उत्तर प्रदेश में कब–कब हुई प्रमुख राजनेताओं की हत्या

- **शारदा प्रसाद रावत**
  पूर्व विधायक, जनता दल–बोम्मई
  हत्या– 8 सितम्बर 1991
- **महेन्द्र सिंह भाटी**
  विधायक, जनता दल–ब
  हत्या– 13 सितम्बर 1992
- **लक्ष्मीशंकर यादव**
  पूर्व मंत्री, कांग्रेस
  हत्या– 20 अक्टूबर 1995
- **ओमप्रकाश पासवान**
  पूर्व विधायक, सपा (गोरखपुर)
  हत्या– 25 मार्च 1996
- **जवाहर सिंह यादव उर्फ पण्डित**
  विधायक, सपा (झूंसी–इलाहाबाद)
  हत्या– 13 अगस्त 1996
- **ब्रह्मदत्त द्विवेदी**
  विधायक, भाजपा (फर्रूखाबाद)
  हत्या– 9/10 फरवरी 1997
- **वीरेन्द्र प्रताप शाही**
  पूर्व विधायक, बसपा, (लक्ष्मीनगर, गोरखपुर)
  हत्या– 31 मार्च 1997
- **इंद्रभद्र सिंह**
  पूर्व विधायक (इसौली, सुलतानपुर)
  हत्या– 21 जनवरी 1998
- **भगवान बक्श सिंह**
  एमएलसी (शिक्षक)
  हत्या– 8 सितम्बर 1999

➔

मोटी चुटिया थी। इलाहाबाद में अतीक अहमद के विरोधी खेमे के विधायक राजू पाल की हत्या हुई तो उसे साम्प्रदायिक रंग देने की कोशिश हुई। शहर में दंगा भड़काने की नीयत से कई जगहों पर एक खास सम्प्रदाय के लोगों को निशाना बनाया गया। गोरखपुर की चर्चा करें तो वहां के सांसद योगी आदित्य नाथ ने ऐसे उग्रपंथी नेता की छवि बना ली जो हिन्दू हितों के लिए किसी भी हद तक जा सकते हैं।

सवाल यह है कि आखिर क्या वजह है कि गुण्डे अपराध करते हैं, माफिया बनते हैं, फिर राजनेता बनते हैं और पुलिस कुछ नहीं कर पाती। सच्चाई यह है कि उत्तर प्रदेश में पुलिस का हाल–बेहाल है। उसकी मजबूरी यह है कि जिन अपराधियों का वारंट लेकर तलाशती फिरती है और कभी ठोक–पीट कर अदालत में हाजिर कर देती है। वही माफिया कभी जेल से और कभी क्षेत्र से न केवल चुनाव लड़ते हैं बल्कि जीतते भी हैं। यह भी सब जानते हैं कि पुलिस के सिपाहियों–अफसरों की तैनाती–तबादले और निलंबन–लाइनहाजिर करने का अधिकार हकीकत में सत्ताधारी नेताओं के हाथ में है। यही वजह है कि पुलिस अक्सर सत्तारूढ़ दल की एजेंसी के रूप में कार्य करती नजर आती है। कभी राजा भैया जैसे नेताओं को पुलिस

➔

- **निर्भयपाल शर्मा**
  विधायक, भाजपा (सहारनपुर)
  हत्या– 5/6 नवम्बर 2000
- **फूलन देवी**
  सांसद, सपा (मिर्जापुर)
  हत्या– 25 जुलाई 2001
- **मंजूर अहमद**
  विधायक, सपा (बहेड़ी–बरेली)
  हत्या– 8 मार्च 2002
- **संतोष शुक्ला**
  अध्यक्ष–श्रम संविदा बोर्ड, उ.प्र.
  हत्या– 12 अक्टूबर 2001
- **अजीत सिंह**
  एम.एल.सी, सपा
  हत्या– 4 सितम्बर 2004
- **राजू पाल**
  विधायक, बसपा (इलाहाबाद)
  हत्या– 25 जनवरी 2005
- **लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी**
  पूर्व सांसद, भाजपा (कैसरगंज)
  हत्या– 19 जून 2005
- **कृष्णानन्द राय**
  विधायक, भाजपा (मुहम्मदाबाद, गाजीपुर)
  हत्या– 29 नवम्बर 2005
- **हरदेव रावत**
  पूर्व विधायक, सपा
  हत्या– 7 जनवरी 2006
- **चौधरी मलखान सिंह**
  पूर्व विधायक, रालोद
  हत्या– 20 मार्च 2006

सत्ता के इशारे पर गिरफ्तार करती है, जेल का रास्ता दिखाती है, कथित रुप से अत्याचार भी करती है तो कभी सरकार बदलने पर उन्हें सिर–माथे पर बिठाती है। उनके इशारे पर पुलिस अफसरों की तैनाती होती है।

जब पुलिस का हाल ऐसा हो तो अपराधी कैसे डरें? उन्हें यह पता है कि वो अपराध करेंगे और वहां से निकल जायेंगे। अदालत में जब चाहेंगे आत्मसमर्पण करेंगे और पुलिस कुछ नही कर पायेगी। पुलिस की कमजोरी के चलते ही बिहार के माफियाओं ने उत्तर प्रदेश के माफियाओं से गठजोड़ बना लिया है। बिहार से असलहे भी आते हैं और अपराधी भी। साथ ही जब चाहते हैं वो आसानी से निकल भी जाते हैं। उत्तर प्रदेश में हुई हत्याओं में बिहार से आये शूटर भी शामिल रहते हैं, यह नयी बात नहीं है। बिहार के बाहुबलियों और पूर्वांचल के माफियाओं के रिश्ते अर्से से हैं और काफी मजबूत हैं। मगर ये 'रिश्ते' अब प्रदेश की कानून–व्यवस्था के लिए बड़ा खतरा बन गये हैं। पिछले कुछ समय में इन दोनों के बीच एक–दूसरे की मदद का दौर तेज हुआ है। बिहार सरकार की सख्ती से वहां के बाहुबलियों के पूर्वाचल में अपना ठिकाना बनाने की आशंका बढ़ गयी है। माना जा रहा है कि जैसे–जैसे बिहार सरकार बाहुबलियों पर शिकंजा कसेगी, वैसे–वैसे वे उत्तर प्रदेश रुख करेंगे। वैसे भी पूर्वांचल अपराधियों का 'हब' बनता जा रहा है।

यदि बिहार के अपराधी भी यहीं पूर्वांचल में प्रश्रय पा गये तो स्थिति बहुत भयावह हो जायेगी।

अभी तक तो दोनों प्रदेशों के बाहुबलियों के बीच 'शूटर' का आदान–प्रदान व वर्चस्व की लड़ाई में सहयोग ही मुख्य रहा मगर अब 'ट्रेंड' बदल रहा है। अभी तक जो माफिया ठेकेदारी, वसूली, वर्चस्व जैसे मुद्दों तक सीमित था। वह अब खुद राजनीतिक परिदृश्य पर ही कब्जा करना चाहता है। विधायकों खासतौर पर राजू पाल और कृष्णानन्द राय की हत्या सिर्फ संकेत हैं कि अब बाहुबली जिस सीट को चुन लेगा, वहां या तो वह खुद या उसका आदमी ही चुनाव जीतेगा। प्रतिद्वंद्वी चाहे किसी दल का हो या निर्दलीय हो, उसे रास्ते से हटाया जा सकता है। सत्ता में बने रहने के लिए हर राजनीतिक दल ने आपराधिक छवि के लोगों को पाला–पोसा है। अपनी राजनीतिक प्रतिद्वंद्विता निबटाने के लिए भी इनका सहारा लिया। बगैर यह सोचे कि इसके दूरगामी परिणाम क्या होंगे? अब जिन्न बोतल से निकल चुका है। यही नही, प्रशासनिक अमले में भी ये अपनी मर्जी से नियुक्तियां कराने में सक्षम हैं। ऐसे में प्रशासन की भूमिका नगण्य है। आमतौर पर नौकरशाही नेताओं के मंतव्यों को पूरा करने वाले उपकरण मात्र बनकर रह गयी है।

अगर ऐसा ही होता रहा तो शायद आने वाले कल में राजनीतिक दल इन्हीं माफिया को सीटों की सूची देंगे या ये खुद ऐसी सूची बनायेंगे, जिस पर चुनाव जीतना है। ऐसे माहौल में कोई शरीफ प्रतिद्वंद्वी ढूंढ़ना मुश्किल होगा। विभिन्न दलों के माफिया ही एक–दूसरे के खिलाफ चुनाव लड़ने–लड़ाने के लिए बचेंगे। यह भी तथ्य है कि एक राजनीतिक दल दूसरे राजनीतिक दल के बाहुबली से मुकाबिल होने के लिए अपने दल में उन्हें जगह देता है। मगर तथ्य यह भी है कि हर एक बाहुबली को सत्ता का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सहयोग चाहिए होता है। इसके बगैर वह ज्यादा पनप ही नहीं सकता। लेकिन कोई भी राजनीतिक दल इसे मानने को तैयार नही है। अपराधीकरण का ठीकरा निरीह जनता पर फोड़ दिया जाता है। राजनेताओं का बड़े स्पष्ट शब्दों में यह कहना है कि जनता ही माफियाओं और अपराधियों को जिता देती है। साफ है कि माफियाओं की राह में नेता रोड़ा बनना नही चाहते। ऐसी स्थिति में माफियाओं के दोनों हाथ में लड्डू है। एकतरफ राजनीति का रसूख़ है तो दूसरी तरफ दौलत और कारोबार का साम्राज्य।

अब सवाल यह है कि आखिर पूर्वांचल में माफिया टकराते किस लिए हैं तो इसका

अबू सलेम को हमेशा मशहूर होने की ख्वाइश थी और वह खुद को डॉन कहलाना पसंद करता था।

एक जवाब है आर्थिक साम्राज्य खड़ा करने के लिए। पूर्वांचल में एक तरफ काले सोने (कोयले) का कारोबार है तो दूसरी तरफ हैं रेलवे के ठेके। कहीं रेशम और बनारसी साड़ियां हैं तो कहीं है कालीन का कारोबार। चांदी का काम और अन्य धंधे भी माफियाओं को माल कमाने का मौका देते हैं। पूर्वी उत्तर प्रदेश के रेशम, कोयला और कालीन उद्योग का सालाना कारोबार 10,000 करोड़ रुपये से काफी ज्यादा का है, वही रेल ठेके 4,000 करोड़ रुपये से ज्यादा के हैं। माफिया इसमें दखल बना कर करोड़ों रुपये पैदा करते हैं। साथ ही इन धंधों से कमाई करनेवाले व्यवसायियों से गुण्डा टैक्स और फिरौती वसूलते हैं।

बाहुबली एम.एल.सी. अजीत सिंह की मौत भी उसी दिन हुई जिस दिन उनका जन्म हुआ था। वह अपने ही सुरक्षाकर्मी की गोली का शिकार हुए।

पूर्वी उत्तर प्रदेश खासकर गोरखपुर के आस–पास में 'नाम' कमा चुके बाहुबलियों की रंजिश की प्रमुख वजह रेल के ठेके रहे हैं। एक दौर में हरिशंकर तिवारी और वीरेन्द्र प्रताप शाही की रंजिश के परवान चढ़ने की वजह कमाई पर कब्जे को लेकर थी। बाद में उसे राजनीतिक वजहों ने और बढ़ाया। इसी तरह इलाहाबाद में रेल ठेकों को लेकर रंजिश बढ़ रही है। जाहिर है माफिया गिरोहों के बीच जंग तभी होती है, जब इनकी नजर किसी बड़े टेंडर पर होती है। रेल ठेकों में सबसे ज्यादा चोखा धंधा स्क्रैप का माना जाता है इसलिए तनाव तब ज्यादा बढ़ता है, जब स्क्रैप की नीलामी होती है। इसी तरह काले सोने की काली कमाई में भी काफी गरमी हैं। कोयले के काले कारोबार में माफियाओं को इतनी चमक नजर आती है कि इसको लेकर कई लाशें गिर चुकी हैं। पूर्वी उत्तर प्रदेश में कोयले का काला कारोबार 1990 के दशक में पनपा, जब राज्य सरकार ने कोयला आधारित औद्योगिक इकाइयों को रियायतें दीं। उसी दौरान कोल इंडिया लिमिटेड ने भी औद्योगिक इकाइयों के कोयला खरीदने के लिए उदार नीति की घोषणा की। यही वक्त था जब वाराणसी में कागजों पर कई छोटी–बड़ी औद्योगिक इकाइयां कुकुरमुत्तों की तरह उग आयीं। ये फर्जी कागजों के आधार पर कोयला खरीदती थीं। इन्हीं की बदौलत रोजाना हजारों ट्रक कोयला बिहार से वाराणसी आने लगा। इन फर्जी उद्योगों के मालिक सरकार से सस्ते में कोयला खरीदते और ऊंचे दामों पर ठिकाने लगा देते। जब माफिया सरगनाओं की नज़र इस ओर पड़ी कि कोयले की काली कमाई से व्यवसायी अपनी जेबें मोटी कर रहे हैं, तो इन्हें अपने हिस्से की दरकार महसूस हुई। व्यवसायियों को सुरक्षा

देने और सुरक्षा शुल्क वसूलने की होड़ लगी। यहीं से माफिया सरगनाओं की जंग गइरायी। इसी दौलत के चक्कर में कोयला किंग और विश्व हिन्दू परिषद के नेता नंदलाल रूंगटा की हत्या हुई, तो इस व्यवसाय के बड़े खिलाड़ी आर.के. जैन का भी कत्ल हुआ। कोयला व्यवसायी आनन्द अग्रवाल जैसे भी लोग हैं, जिनका कथित तौर पर फिरौती के लिए अपहरण किया जाता है और फिर पैसा लेकर छोड़ दिया जाता है।

इतना ही नहीं, कोयले के कारोबार की धमक लखनऊ तक भी गूंज रही है। 19 जून 2005 को लखनऊ के विकासनगर इलाके में असलहे गरजे और भारतीय जनता पार्टी के कैसरगंज इलाके के पूर्व सांसद और कोयला व्यापारी लक्ष्मी नारायण त्रिपाठी की हत्या हो गयी। पता यह चला कि यह हत्या कोयला व्यापार में वर्चस्व को लेकर की गयी। इस हमले में उनका ड्राइवर नंदकिशोर भी मारा गया। इस हमले का आरोप 1997 से 2002 के बीच भाजपा सरकार में मंत्री रहे मार्कण्डेय चन्द्र और उनके पुत्रों पर लगा।

इसी तरह, पूर्वांचल में रेशम, बनारसी साड़ी और कालीन के कारोबारियों के पास अच्छा–खासा काम है। इनसे भी माफियाओं की वसूली छुपी नहीं है। एक और तथ्य गौर करनेवाला है कि ज्यादातर वही कारोबारी माफिया सरगनाओं का शिकार बनते हैं, जिन्होंने काफी काला धन जमा कर रखा है या फिर कारोबार में काले तौरतरीके अपनाते हैं। यही कारण है कि अपहरण और रंगदारी एक उद्योग की तरह इस इलाके में फैलता चला जा रहा है। बिहार की तरह छोटी–छोटी फिरौती के लिए यहां अपहरण होने शुरू हो गये हैं। यहां तक कहा जा रहा है कि बिहार के अपहरण और रंगदारी के बड़े खिलाड़ियों ने वाराणसी में भी अपने अड्डे बना लिये हैं। इन माफियाओं ने गोरखपुर से लेकर इलाहाबाद तक कई स्थानीय गिरोहों के साथ अपना नेटवर्क खड़ा कर लिया है। यह धंधा शहरों से लेकर जौनपुर, मिर्जापुर, सोनभद्र, भदोही, मऊ और आजमगढ़ तक फैल गया है।

पुलिस का मानना है कि माफिया सरगना बृजेश सिंह, बबलू श्रीवास्तव, अबू सलेम और श्रीप्रकाश शुक्ला ने सबसे पहले मुम्बई अंडरवर्ल्ड से रिश्तों की बुनियाद डाली।

कोई भी ऐसा महीना नहीं गुजरता होगा, जब पूर्वांचल में फिरौती और रंगदारी का मामला नहीं गूंजता। यही वजह है कि धीरे–धीरे बहुत से कारोबारी अपना कारोबार यहां से समेट रहे हैं। फिरौती, अपहरण, हत्या और गुण्डागर्दी से परेशान व्यापारी दिल्ली, मुम्बई, कोलकाता और दूसरे शहरों की ओर कूच कर रहे हैं। इतना ही नहीं छोटे व्यापारियों ने भी पलायन शुरू कर दिया है। वाराणसी अपराध का केन्द्र

बनता जा रहा है। पूरा पूर्वांचल माफिया गतिविधियों की गिरफ्त में आ गया है। रेशम व्यापारियों को लग रहा है कि किसी दूसरे शहर में नयी मंजिल तलाशें, तो भदोही के कालीन निर्माताओं ने कारोबार फैलाने की अपनी योजनाएं मुल्तवी कर दी हैं। इक्कीसवीं सदी में कदम रखने के साथ ये पलायन बढ़ता जा रहा है। जो कारोबारी रह रहे हैं, उन्होंने खुद को उसके अनुरूप ढाल लिया है। उनके लिए ये अब कोई नयी बात नहीं रह गयी है। अगर कोई अपहृत हो गया है तो पुलिस की भूमिका बस इतनी है कि उसे किसी तरह से छुड़ाया जाये, वो फिर चाहे फिरौती की रकम पहुंचने के बाद छूटे।

शार्पशूटर मुन्ना बजरंगी की पत्नी उसके अपराधों की जानकार है। बजरंगी की यह पत्नी सुलतानपुर के जगदीशपुर इलाके के एक शातिर अपराधी की बहन है। यह मुन्ना बजरंगी की दूसरी पत्नी है।

आप माने चाहे न माने लेकिन इन माफिया गिरोहों को राजनेताओं और पुलिस ने बहुत अधिक बढ़ावा दिया। कल्याण सिंह के मुख्यमंत्रित्व काल में लगभग साढ़े सात सौ माफिया गैंगों की सक्रियता थी। उस समय ऐसे सात सौ पुलिस अधिकारियों की शिनाख़्त की गयी थी, जिनके अपराधियों से रिश्ते थे। उस दौर में जब माफिया सरगना श्रीप्रकाश शुक्ला मुठभेड़ में मारा गया तो अखबारों में छपा कि उसके तत्कालीन भाजपा सरकार के तीन प्रभावशाली मंत्रियों से अच्छे रिश्ते थे। राजनाथ सिंह ने राजा भैया और अमरमणि त्रिपाठी जैसे लोगों को अपने मंत्रिमण्डल में जगह दी थी। मुलायम सिंह यादव जब पहली बार मुख्यमंत्री बने तो उन्होंने एक स्थानीय डॉन अरुण शंकर शुक्ला उर्फ अन्ना से अपने नजदीकी सम्बन्ध को केवल स्वीकार ही नहीं किया, बल्कि उन्हें राजनीति में भी लाये। मायावती भी बसपा से मुख्तार अंसारी टिकट दे चुकी हैं। राज्य की 2002 की विधानसभा में 207 विधायकों के खिलाफ अपराधिक मामले हैं। अखबारों और पत्रिकाओं ने सबसे ज्यादा 80 हिस्ट्रीशीटर सपा के बताए। बसपा के 25 से अधिक और भाजपा के 37 विधायक आपराधिक छवि वाले चिह्नित हुए। कांग्रेस में ऐसे विधायकों की संख्या 12, राष्ट्रीय लोकदल में 7, लोकतांत्रिक कांग्रेस में 2 है। कुल 5 निर्दलीय विधायकों के खिलाफ अपराधिक मामले है। यह उत्तर प्रदेश में ही सम्भव है कि एक अपराधी को पकड़ने आये पुलिस बल को सरेआम सत्ताधारी पार्टी के गुंडों से मार खानी पड़े। आम जनता के लिए दुखद पहलू यह है कि उत्तर प्रदेश की राजनीति में बाहुबलियों का दखल लगातार बढ़ता जा रहा है। राजनीतिक दलों के रुख से ऐसा नहीं लगता कि कोई भी

दल वाकई में अपराधियों से दूर करने की मुहिम शुरू करेगा। सभी एक-दूसरे पर आरोप मढ़ने और गढ़ने की जुगत में लगे रहते हैं। दावा करते हैं कि दूसरे दलों में अपराधी हैं, लेकिन अपने दल के अपराधियों के मुद्दे पर मौन हैं। कहते हैं कि अभी आरोप सिद्ध नहीं हुए हैं। दरअसल अपराधियों का राजनीतिक संरक्षण लगातार जारी है।

बिहार के नेताओं से भी संबंध बढ़ रहे हैं। 29 मार्च 2005 को मुख्तार अंसारी की भतीजी और अफजाल अंसारी की बेटी की शादी में समाजवादी पार्टी के नेताओं की भीड़ तो थी ही, लेकिन लालू प्रसाद यादव की मौजूदगी ने सबको चौंकाया। वहीं उस शादी में सीवान के बाहुबली नेता शहाबुद्दीन ने भी शिरकत की। ये कोई पहला और आखिरी मामला नहीं है। माफियाओं और उनके परिवार के कार्यक्रमों में नेताओं का नजर आना अचंभित करनेवाला एकदम नहीं है। जाहिर है बड़े नेता जिन बाहुबलियों को अपने दल में जगह देने से नहीं हिचकते तो उनके परिवार के कार्यक्रमों मे आना-जाना कोई छुपाने वाली बात नहीं है।

जो लोग अपराध की इबारत लिख रहे हैं, उन्हें अब राजनीति का हुनर भी आ गया है। उन्हें अगर अपने आपराधिक गिरोह विस्तार करना आता है तो यह भी पता है किस तरह से राजनीतिक मुकाम हासिल किया जा सकता है।

अपराधियों के अंदर अपने आपराधिक और आर्थिक साम्राज्य की रक्षा के लिए राजनीति का चाव पैदा हुआ है तो उनकी राजनीति का अंदाज भी अलग है। इनके फैसले बंदूक की नोंक पर या सड़कों पर खून बहा कर होते हैं। बाहुबलियों की राजनीति या धंधे में किसी ने दखल देने की कोशिश की तो उसको ठिकाने लगाना उनके लिए कोई कठिन काम नही है, वो चाहे सांसद-विधायक हों या फिर मंत्री-पूर्व मंत्री। वर्चस्व की लड़ाई का ये सिलसिला कहां खत्म होगा, ये किसी को भी नहीं पता है।

अगर समूचे उत्तर प्रदेश की राजनीति में 1990 के बाद हुई प्रमुख राजनीतिक हत्याओं पर गौर करें तो 8 सितम्बर 1991 को भारतीय जनता पार्टी के शासनकाल में जनता दल (बोम्मई) के पूर्व विधायक शारदा प्रसाद रावत की हत्या कर दी गयी। इसके ठीक एक साल बाद 13 सितम्बर 1992 को दादरी (गाजियाबाद) में जनता दल (ब) के विधायक महेन्द्र भाटी की हत्या कर दी गयी। इस समय कल्याण सिंह प्रदेश के मुख्यमंत्री थे। फिर 20 नवम्बर 1995 को कांग्रेस सरकार में मंत्री रह चुके लक्ष्मीशंकर यादव की हत्या कर दी गयी। उस समय

प्रदेश में राष्ट्रपति शासन चल रहा था। उसके बाद 25 मार्च 1996 को एक जनसभा पर बमों से हमला हुआ। इस हमले का निशाना समाजवादी पार्टी के गोरखपुर से विधायक रह चुके ओमप्रकाश पासवान थे। इस हमले में ओमप्रकाश पासवान मारे गये। इसी साल में 13 अगस्त 1996 को इलाहाबाद के झूंसी इलाके के समाजवादी पार्टी के विधायक जवाहर सिंह यादव उर्फ पण्डित की हत्या कर दी गयी। फिर 9 फरवरी 1997 को राष्ट्रपति शासन के दौरान फर्रुखाबाद में भारतीय जनता पार्टी के पूर्व मंत्री ब्रह्मदत्त द्विवेदी की हत्या कर दी गयी।

उत्तर प्रदेश के अपराधजगत की माफिया संस्कृति पूर्वांचल के गिरोहों ने ही दी है। इसमें जरायम के टेढ़े रास्ते से होते हुए राजनीतिक मुकाम हासिल करने वाले हरिशंकर तिवारी और वीरेन्द्र प्रताप शाही के नाम भी आते है। इन दोनों के गुटों ने प्रदेश में माफिया गिरोहों के टकराव को जन्म दिया और विस्तार भी।

31 मार्च 1997 को पहली बार लखनऊ के इन्दिरानगर इलाके में ए.के.-47 राइफल गरजी और इसका शिकार गोरखपुर के पूर्व विधायक वीरेन्द्र प्रताप शाही हुए। बताया जाता है कि यह हत्या रेलवे ठेके को लेकर शार्पशूटर माफिया श्रीप्रकाश शुक्ला ने की थी। उस समय प्रदेश की मुख्यमंत्री मायावती थीं। इसी तरह 21 जनवरी 1998 को इसौली (सुल्तानपुर) के पूर्व विधायक इंद्रभद्र सिंह की हत्या कर दी गयी। इस हत्या में आपराधिक छवि वाले संत ज्ञानेश्वर स्वामी सदानन्द का नाम आया। बाद में 10 फरवरी 2006 को इलाहाबाद में माघ मेले से लौट रहे संत ज्ञानेश्वर की हंडिया इलाके में ए.के. रायफलों से हमला कर हत्या कर दी गयी। इस हत्या में अन्य सात लोग भी मारे गये। इस हत्या का आरोप इंदभद्र सिंह के बेटे और सपा विधायक चंद्रभद्र सिंह पर लगा। यह कहा गया कि यह हत्याकाण्ड पिता की हत्या का बदला लेने के लिए हुई। 8 सितम्बर 1999 को लखनऊ में शिक्षक विधायक भगवान बख्श सिंह की हत्या कर दी गयी, तब प्रदेश में कल्याण सिंह की सरकार का राज था। इसके बाद 5 नवम्बर 2000 सहारनपुर से भारतीय जनता पार्टी के विधायक निर्भयपाल शर्मा की हत्या कर दी गयी। उस समय उनकी ही पार्टी का शासन था और राजनाथ सिंह प्रदेश के मुख्यमंत्री थे।

फिर पूर्व दस्यु सुंदरी फूलन देवी की कहानी का अंत हुआ। डाकू की जिंदगी से

निजात् पाने के बाद फूलन देवी को मुलायम सिंह यादव का आशीर्वाद मिला। एक बार तो समाजवादी पार्टी के प्रत्याशी के रूप में वो सांसद का चुनाव मिर्जापुर से हारी पर अगले चुनाव में वो सांसद चुन ली गयीं। लेकिन सांसद रहते हुए दिल्ली में 25 जुलाई 2001 को उनकी हत्या कर दी गयी। इस हत्या का आरोप शेर सिंह राणा पर लगा। फूलन देवी की हत्या के आरोप में तिहाड़ जेल भेजा गया शेर सिंह राणा बाद में वहां से भाग निकलने में कामयाब रहा। पुलिस उसको ढूंढ़ती रही और उसने फरारी के दौरान ही पहले न्यूज़ चैनल 'सहारा समय' और कुछ महीनों बाद 'आजतक' को साक्षात्कार दिया। उसकी बातों से ऐसा लगा कि वह एक जातिविशेष का हीरो बनना चाहता है। साथ ही उसके अंदर राजनीति में जगह बनाने की इच्छा नज़र आ रही है। हालांकि 24 अप्रैल को कोलकाता में शेर सिंह राणा को गिरफ्तार कर लिया गया। फिर 12 अक्टूबर 2001 को उत्तर प्रदेश श्रम संविदा बोर्ड के अध्यक्ष संतोष शुक्ला की हत्या हुई। इसके बाद 8 मार्च 2002 को बरेली के बहेड़ी से विधायक मंजूर अहमद की हत्या कर दी गयी। उनकी हत्या उस समय की गयी, जब वह लखनऊ में राजभवन के गेट पर एक प्रदर्शन में हिस्सा ले रहे थे। मंजूर सपा के विधायक थे और भाजपा के शासनकाल में उनकी हत्या हुई।

पूर्वांचल का यही दर्द है कि अब यहां हर समस्या का हल बंदूक की गोलियों से निकाला जाता है। कभी भी किसी भी मुद्दे पर शोले बरस सकते हैं, बंदूकें आग उगल सकती हैं और धरती पर इंसानी लहू पानी की तरह बह सकता है।

फिर आयी मुलायम सिंह यादव की सरकार और उन्हीं के शासनकाल में 4 सितम्बर 2004 को समाजवादी पार्टी के विधानपरिषद के सदस्य अजीत सिंह उन्नाव में अपने घर अपने ही सुरक्षाकर्मी की गोली का शिकार हुए। फिर 25 जनवरी 2005 में बहुजन समाज पार्टी के विधायक राजू पाल की हत्या कर दी गयी। इस हत्या का इल्जाम अतीक अहमद के भाई पर आया। अतीक अहमद और राजू पाल की अदावत बहुत पुरानी थी। इसके बाद लखनऊ के विकासनगर इलाके में गोलियां गरजीं और 19 जून 2005 को कैसरगंज से भारतीय जनता पार्टी के सांसद रह चुके लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी इन गोलियों का शिकार हुए। उनका ड्राइवर भी मारा गया। गाजीपुर में भी गोलियों की तड़तड़ाहट गूंजी और इस बार इस हमले का शिकार हुए मुहम्मदाबाद से भारतीय जनता पार्टी के विधायक कृष्णानन्द राय। 29

नवम्बर 2005 को हुए इस हमले में केवल कृष्णानन्द राय ही छलनी नहीं हुए बल्कि उनके सात समर्थक भी मारे गये। 7 जनवरी 2006 की बात करें तो उस दिन पंचायत अध्यक्ष चुनाव था। बाराबंकी में समाजवादी पार्टी के पूर्व विधायक हरदेव रावत पर हमला हुआ और उनका कत्ल कर दिया गया। इसके बाद अलीगढ़ में बंदूकें गरजीं। इस बार राष्ट्रीय लोकदल के पूर्व विधायक चौधरी मलखान सिंह निशाना बने। हमले में उनका गनर भी मारा गया और दो घायल हुए।

2002 के विधानसभा चुनाव में वाराणसी और आसपास के जिलों में 60 से अधिक उन लोगों ने चुनाव लड़ा, जिनके खिलाफ मामले दर्ज थे। इनमें से ज्यादातर किसी न किसी राजनीतिक दल का टिकट पाने में सफल रहे थे। नौगढ़ की पहाड़ियों में कभी दस्यु सरगना के रूप में आतंक का पर्याय बने रहे हरि प्रसाद उर्फ घमड़ी ने सोनभद्र की राबर्ट्सगंज विधानसभा सीट से बहुजन क्रान्ति दल के टिकट पर किस्मत आजमायी तो कुख्यात नागा यादव ने वाराणसी की गंगापुर सीट से चुनाव लड़ा।

इतने सारे राजनीतिज्ञों की हत्या से एक बात तो साफ हो जाती है कि प्रदेश की राजनीति में अपराधियों ने अपनी गहरी जड़ें फैला ली हैं। कभी धंधे की धार तेज करने के लिए और कभी राजनीति का राजा बनने के लिए हत्याएं हुईं। वर्चस्व की जंग ने कई नेताओं की बली चढ़ी। ये सिलसिला थम जायेगा, ऐसा नजर नहीं आता। तमाम बाहुबलियों की भुजाएं राजनीति में रसूख़ कायम करने के लिए उठी हैं। ऐसे में किसी और नेता की जान चली जाये तो किसी को अचरज नहीं होना चाहिए। पूर्वांचल से चली अपराध की इस बयार ने लखनऊ को भी अपना अड्डा बनाया है। अगर लखनऊ के माफियाओं पर चर्चा हो तो इसमें बड़ा नाम बबलू श्रीवास्तव का आता है। अंतरराष्ट्रीय अपराध जगत में लखनऊ का नाम काला करने का काम बबलू ने किया। सच है कि अपने कुख्यात तौरतरीकों से जिस तरह लखनऊ और लखनऊ विश्वविद्यालय का नाम ओमप्रकाश श्रीवास्तव उर्फ बबलू श्रीवास्तव ने 'विख्यात' किया, उस तरह की प्रसिद्धि ये शहर और विश्वविद्यालय दुबारा नहीं चाहेगा।

लखनऊ विश्वविद्यालय के छात्रजीवन के दौरान छोटी–मोटी गुण्डई से अपना आपराधिक कॅरियर शुरू करने वाला बबलू श्रीवास्तव एक दौर में अन्तरराष्ट्रीय कुख्यात माफिया के रूप मे स्थापित हो गया था। वो भी वक्त था, जब बबलू श्रीवास्तव को माफिया डॉन दाऊद इब्राहिम का दाहिना हाथ समझा जाता था लेकिन उससे संबंध खराब होने के बाद बबलू ने एक अलग अपराध का साम्राज्य खड़ा कर लिया। अपहरण काण्ड को अंजाम देने की जो बेहतरीन तकनीक विकसित की गयी, उसका मास्टर माइंड बबलू श्रीवास्तव को ही माना जाता है। ये बबलू का ही कुख्यात अंदाज था कि उसके अपहरण के नये–नये तौरतरीकों से पूरे देश की पुलिस दांतों तले उंगली दबा लेती थी। अपहरण काण्डों में उसके नाम की तूती बोलती थी। उसने मुम्बई से लेकर कोलकाता तक और दिल्ली से लेकर दक्षिण भारत तक अपहरण काण्ड प्लान किये और फिरौती भी वसूली। गिरफ्तार होने से पहले तक बबलू श्रीवास्तव का नाम आपराधिक प्रवृत्ति के लोगों के अंदर ग्लैमर पैदा करता था। कई बेरोजगार युवा और छात्र 'बबलू भाई' जैसा बनने के चक्कर में अपराध के दलदल में फंस गये। अपनी गिरफ्तारी के बाद जेल में रहते हुए भी बबलू ने अपहरण काण्डों को अंजाम दिया। बबलू श्रीवास्तव की 'मोडस ऑपरेंडी' में नये लड़कों के लिए भी काफी जगह रहती थी। कई बार ऐसा भी होता था कि विभिन्न आपराधिक घटनाओं को अंजाम देनेवाले लड़कों को ये नहीं पता होता था कि इसका मास्टर माइंड कौन है। सैकड़ों सिम कार्डों के नम्बर को अपनी जुबान पर याद रखनेवाले बबलू श्रीवास्तव के अंदर नेतागिरी की कसक भी थी। वह अपने अपराधों को खादी के सफेद कपड़े में ढकना चाहता था। इसलिए उसने चुनाव लड़ने की ठानी। अपना दल ने बबलू श्रीवास्तव को टिकट देने में कोई हिचक नही दिखायी। जेल में रहते हुए बबलू श्रीवास्तव ने सीतापुर से चुनाव भी लड़ा, लेकिन सफलता नहीं मिली। अपराध की दुनिया के 'विद्वान' बबलू

उत्तर प्रदेश में 1990 से लेकर 2005 तक 20 से ज्यादा राजनीतिज्ञों की हत्या से एक बात तो साफ हो जाती है कि प्रदेश की राजनीति में अपराधियों ने अपनी गहरी जड़ें फैला रखी हैं। कभी धन्धे की धार तेज़ करने के लिए और कभी राजनीति का राजा बनने के लिए हत्याएं की गयीं।

श्रीवास्तव ने एक किताब भी लिख डाली है। आज भी लोग बबलू से घबराते हैं क्योंकि उसका अपराध सिमटा जरूर है लेकिन खत्म नहीं हुआ है। बबलू श्रीवास्तव ने जिन अपहरण काण्डों को राजधानी लखनऊ में अंजाम दिया, उसमें ज्यादातर मामलों में अपहृत किये गये लोग फिरौती देकर ही छूट पाये।

बबलू ने अपने सहयोगियों राधे मोहन, आशीश, गौतम, काके सरदार, विक्की आदि के सहारे नब्बे के दशक के शुरुआती साल में इन्दिरानगर से उत्तर प्रदेश जल निगम के अधिशासी अभियंता के पुत्र को कार सहित अगुवा कर लिया था। अखबारों में छपा कि बुंदेलखण्ड क्षेत्र में किसी स्थान पर फिरौती की रकम अदाकर अभियन्ता ने अपने पुत्र को छुड़ाया। इसके बाद अरोड़ा और संजय झुनझुनवाला अपहरण काण्ड में भी पुलिस कुछ नहीं कर सकी। 27 अक्टूबर 1994 को बबलू गैंग ने कार शोरूम मालिक के पुत्र का अपहरण कर लिया। तत्कालीन एसपी सिटी के प्रयासों से वह छूटा, पर कहा जाता है कि करोड़ों की फिरौती देकर। इसके बाद एक प्रमुख दवा व्यवसायी के पुत्र का अपहरण हुआ। इस मामले में भी फिरौती अदा करनी पड़ी।

जब बबलू जैसे माफिया को उम्मीद है कि वह विधानसभा और संसद तक पहुंचेगा तो फिर दूसरे माफियाओं के ऐसा सोचने में क्या गलत है। लेकिन ये सच है कि राजनीति धीरे–धीरे एक खतरनाक मुकाम की ओर बढ़ रही है। समझ में नही आ रहा है कि जिस तरह से माफियाओं के बीच दुश्मनी गहरा रही है, वो उनके बीच शक्ति संतुलन के समापन का संकेत है या फिर आपराधिक पृष्ठभूमि से राजनीति में आये लोगों में नयी जंग का ऐलान।

इस जंग का माफियाओं को पूरी तरह से अहसास भी है। इसलिए जिनको सुरक्षा का खतरा है, वो खुद के अंगरक्षक लेकर चलते हैं। पुलिस सबको सुरक्षा नही दे सकती है और जिनको सुरक्षा मिली है, उनकी भी जान की गारंटी नही दी जा सकती। ऐसा भी हुआ है कि जिसने जान का खतरा जताया, मार दिया गया। कई मामलों में पुलिस कुछ नही कर सकी और कई मामलों में पुलिस ने कुछ करना नही चाहा। कई ऐसे मौके आये जब माफियाओं के निशाने पर रहे लोगों की सुरक्षा में कमी की गयी और वो मारे गये। गाजीपुर के हरिहरपुर गांव के प्रधान रहे राजेश राय ने जिले से राजधानी तक के अफसरों को लिखित आशंका जतायी कि विधायक मुख्तार अंसारी उनकी हत्या की साजिश कर रहे हैं, लेकिन इस पर ध्यान नही दिया गया। बाद में मुहम्मदाबाद तहसील के सामने दिनदहाड़े फायरिंग में राजेश राय सहित तीन लोग मारे गये। भाजपा विधायक कृष्णानंद राय ने एक दर्जन से ज्यादा मौकों पर न सिर्फ जुबानी बल्कि लिख–पढ़कर भी गुहार लगायी कि मुख्तार अंसारी उनकी जान के दुश्मन हैं और किसी भी वक्त उन पर जानलेवा

हमला कर सकते हैं। भाजपा और बसपा सरकार में कई गनर मिले लेकिन फिर कटौती हुई। बाद में कृष्णानन्द राय मार दिये गये। ये मिसालें बीते दो दशक से पूर्वांचल में चल रहे माफिया गैंगवार की असल शक्ल बयान करती हैं।

मऊ के विधायक मुख्तार अंसारी और भाजपा विधायक कृष्णानंद राय के बीच खूनी जंग के चर्चे सिर्फ गाजीपुर ही नहीं बल्कि पूरे पूर्वांचल में आम रहे हैं। न सिर्फ मंचों और सार्वजनिक स्थानों बल्कि लिखा–पढ़ी में भी दोनों एक–दूसरे को अपनी जान का प्यासा बताया और वह भी दर्जनों बार। कृष्णानंद राय के निकट सहयोगी और शेरपुर के ब्लॉक प्रमुख राजेन्द्र राय के दिनदहाड़े हुई हत्या के विरोध में 26 जून 2005 को गाजीपुर में भाजपा नेताओं ने बड़े स्तर पर विरोध प्रदर्शन किया। इस कार्यक्रम में भाजपा के दिग्गज राजनाथ सिंह, केशरीनाथ त्रिपाठी, कलराज मिश्र और विनय कटियार भी शामिल हुए लेकिन अपने खास साथी की हत्या के विरोध में सरकार के खिलाफ प्रदर्शन कर रही भीड़ में भाजपा विधायक कृष्णानन्द राय नहीं थे। इसकी वजह यह थी कि न सिर्फ पुलिस बल्कि स्वयं कृष्णानन्द राय को भी इस बात की पक्की इत्तला थी कि सीवान के कुछ शूटर, मुजफ्फरनगर का एक कांट्रैक्ट किलर और बाराबंकी व रायबरेली के फरार इनामी बदमाश उस रोज शहर में थे। निशाने पर थे विधायक कृष्णानंद राय। इसी वजह से वे विरोध प्रदर्शन में शामिल नहीं हुए।

वैसे पूर्वांचल की गैंगवार में कृष्णानंद राय को हर बार मात मिली। 2003 से 2005 तक इस गैंगवार के चलते उनके ग्यारह साथी मारे गये, जबकि मुख्तार का एक समर्थक ही इस दौरान मारा गया। पुलिस रिकार्ड के अनुसार मुख्तार अंसारी से चल रही गैंगवार में कृष्णानंद राय के प्रमुख सहयोगी राजेन्द्र राय, छिनकू गिहार, शोभानाथ राय, राम औतार, अविनाश सिंह, कल्लू राय, अखिलेश राय, बिट्टू पाठक, रमेश वर्मा, रमाकान्त भारती और रामेन्द्र राय को अपनी जान गंवानी पड़ी। जबकि मुख्तार अंसारी के समर्थकों में केवल कुख्यात अपराधी अन्नू त्रिपाठी ही मारा गया।

हत्या अपने आप में सबसे संगीन जुर्म माना जाता है लेकिन हत्या अगर राजनीतिक हो तो मामला और भी गंभीर हो जाता है। इलाहाबाद को ही लें तो यहां साल 2005 में एक–दो नहीं बल्कि आठ राजनीतिक हत्याएं हुई हैं, जिनमें से पांच सिर्फ बसपा नेता मारे गये। 2005 की जनवरी में राजू पाल की हत्या के बाद नियमित अंतराल पर राजनीतिक दल से जुड़े नेता मारे जाते रहे। लगभग प्रत्येक मामले में पुलिस ने इन हत्याओं को आपसी रंजिश का मामला बताया। बसपा विधायक राजू पाल की हत्या के बाद यह उम्मीद की जा रही थी कि अब हत्याओं का सिलसिला रुकेगा। पुलिस ने भी यह दावा किया कि अब ऐसा कुछ नहीं हो पायेगा लेकिन कुछ महीनों बाद झूंसी में बसपा नेता गणेश यादव

के करीबी की हत्या हो गयी। यह हत्या भी सनसनीखेज रही। हत्या में सपा विधायक के करीबियों पर आरोप लगे। वे नामजद भी हुए। इसी क्रम में धूमनगंज क्षेत्र में बसपा नेता निरंजन पासी की दिनदहाड़े गोली मार दी गयी। राजू पाल का बेहद करीबी निरंजन की हत्या के बाद हालात बिगड़ गये थे। लोगों ने पुलिस पर पथराव किया था और सिपाहियों से हाथापाई की गयी थी। इसी साल मुंडेरा मंडी में बसपा नेता रामविशाल पाल की गोली मारकर हत्या कर दी गयी। रामविशाल बसपा के इलाहाबाद पश्चिम विधानसभा क्षेत्र के अध्यक्ष थे और राजू पाल के मीडिया प्रभारी भी। इसी दिन थरवई में सुरेश यादव की हत्या कर दी गयी। सुरेश भी बसपाई थे। उन्हें बसपा नेता अशोक यादव का बेहद करीबी माना जाता था। इस तरह 2005 में जनवरी से नवम्बर तक पांच बसपाइयों की हत्या हो गई। राजू पाल को छोड़कर सभी मामलों में पुलिस का कहना था कि हत्याएं राजनीतिक नहीं हैं बल्कि रंजिशन की गयी हैं। राजनीति से इन हत्याओं का कोई लेना–देना नहीं।

यह चौंकानेवाली स्थिति है। अगर यह हत्याएं राजनीतिक हैं तो स्थिति भयावह है क्योंकि जब बैलट की जगह बुलेट से फैसला होगा तो लोकतंत्र को बचाना मुश्किल हो जायेगा। यह बात किसी से छुपी नही है कि राजनीति में स्थापित होने के लिए माफिया सबकुछ करने को तैयार हैं। वे अपने क्षेत्र में हनक कायम करने के बाद प्रदेश की राजनीति के गढ़ लखनऊ की ओर रुख़ कर रहे हैं। माफियाओं को राजनीतिक का चस्का लगने के साथ ही इलाके की ताकत को लखनऊ में नापने का दौर सा चल गया है। माफ़ियाओं को पता है, जो भी लखनऊ में खुद को बेहतर तरीके से स्थापित करेगा, वही राजनीति पर राज करेगा। वही अपने इलाके में अपनी पसंद के इंस्पेक्टर–सब इंस्पेक्टर तैनात करवाने में कामयाब होगा। यह लोग जानते ही हैं कि गोलियों का शिकार हो चुके अजीत सिंह और अज़ीज खां उर्फ अजीजा ने जहां लखनऊ में अपना अच्छा–खासा रसूख़ काम किया था, वहीं लखनऊ में आर्थिक साम्राज्य भी खड़ा कर लिया था। ऐसा करनेवाले ये लोग पहले या आखिरी नहीं थे। अपने बाहुबल और राजनीतिक ताकत के जरिए बहुतों ने लखनऊ में खुद को स्थापित किया। अरुण शंकर शुक्ला 'अन्ना', रघुराज प्रताप सिंह 'राजा भैया', अक्षय प्रताप सिंह, अमरमणि त्रिपाठी, अखिलेश सिंह, मुख्तार अंसारी, धनंजय सिंह, अभय सिंह कितने नाम गिनाये, जिन्होंने लखनऊ में दम और दाम दोनों हासिल किया और बढ़ाया।

ये बात लोग अच्छी तरह से जानते हैं कि सदन के सम्मानित सदस्य होने के बावजूद ऐसे कई माननीय हैं। जो अब भी आपराधिक गतिविधियों पर नजर रखते हैं। साथ ही लखनऊ के भीतर और बाहर अपराधों को अंजाम तक पहुंचाने के गुरेज नहीं करते। आपस में ये माफिया टकराते भी रहते हैं। लखनऊ में रेल के ठेके, निर्माण गतिविधियां,

आवास परियोजनाएं, टेलीफोन के ठेके, बहुमंजिला इमारतों और काम्पलेक्सों का व्यवसाय बाहुबली नेताओं की आंखों में चमक पैदा करता है। हजारों करोड़ रुपये के इन कारोबार पर कौन नहीं काबिज होना चाहेगा? गुनाह के सौदागारों को यूपी की राजधानी हमेशा रास आयी। उन्होंने इस धरती का इस्तेमाल न सिर्फ 'ठौर' के रूप में किया, बल्कि संसाधन हासिल करने में भी किया। माफिया बृजेश सिंह, बबलू श्रीवास्तव, श्रीप्रकाश शुक्ला, मुन्ना बजरंगी, कृपाशंकर, सत्यप्रकाश उर्फ सत्तू पाण्डेय, पवन पाण्डेय जैसे लोगों ने अण्डरवर्ल्ड की राजधानी मुम्बई से रिश्तों का जो नाता जोड़ा, उसी का छोर थामकर आईएसआई एजेंटों, आतंकियों और माफियाओं ने लखनऊ में डेरा जमाया। लाल किले पर हमला हो या फिर अयोध्या हमले की साजिश, अपराधियों ने इस सरजमी का इस्तेमाल किया। पुलिस का मानना है कि बृजेश सिंह और बबलू श्रीवास्तव ने सबसे पहले मुम्बई अण्डरवर्ल्ड से रिश्तों की बुनियाद डाली। इसके बाद श्रीप्रकाश शुक्ला, सत्तू पाण्डेय ने इस पर अपराध की इमारत खड़ी की। अपराधियों ने वसूली, हवाला, मादक पदार्थों, असलहों की तस्करी का धंधा भी यहां से संचालित किया। माफियाओं को सहज पनाह मिलने और अपराध के लिए आवश्यक संसाधन उपलब्ध होते देख आईएसआई समर्थक आतंकियों ने भी शहर पर काली निगाह डाली और आतंकी तैयार करने का कार्य भी शुरू कर दिया।

इसी शहर के चौपटिया इलाके में जन्मा युवक लश्कर–ए–तैयबा के इशारे पर लाल किला पर हमला करने वालों में शामिल हुआ था। इसके बाद सुरक्षा एजेंसियों को नजर में बेनकाब होने के बाद वह फिर लखनऊ आ गया और अकबरी गेट स्थित दुकान में कारोबार करने लगा। एसटीएफ ने उस पर हाथ डाला तो कुछ लोगों ने शहर को साम्प्रदायिक उन्माद की आग में झोंकने का प्रयास किया। वक्त आगे बढ़ा तो गुनाह के सौदागरों ने अपनी जड़े भी गहरी कर लीं। कालांतर मे कई आतंकवादी मारे गये, कुछ पकड़े गये लेकिन उनकी गतिविधियों में कोई कमी नहीं आयी। एसटीएफ ने केंद्रीय खुफिया एजेंसियों के सहयोग से इसी शहर में लश्कर–ए–तैयबा के आतंकी मकसूद अहमद उर्फ अशरफ उर्फ अबू उस्मान उर्फ नासिर उर्फ सलमान खान उर्फ अबू रिजवान उर्फ फरदुल्लहा उर्फ निसार अहमद को गिरफ्तार किया। फिर अतहरुद्दीन उर्फ सुरजिल उर्फ सलीफ उर्फ अबू अब्दुल्लाह उर्फ हसन उर्फ मुजामिल और मोहम्मद इरफान को गिरफ्तार किया गया। लखनऊ की सरजमीं को अपराध के लिए इस्तेमाल करनेवालों में डॉन अबू सलेम और उसकी पत्नी समीरा जुमानी का नाम भी जुड़ा। इन दोनों ने यहां से अपना पासपोर्ट भी बनवाया था।

अपराध और राजनीति ही नही बल्कि माल कमाने के लिए भी लखनऊ मुफीद जगह है। सबसे ज्यादा पैसा ठेकों की कमाई में बहता है और ठेका उनको ही मिलता है, जिनका

सरपरस्त कोई बाहुबली होता है। पिछले 8–10 सालों में लखनऊ से जो सरकारी ठेके उठाये गये, उनमें से कई ठेके उन लोगों को मिले, जिन पर बाहुबली धनंजय सिंह या फिर अभय सिंह का हाथ था। शुरुआती दौर में दोनों ने अपना साम्राज्य लखनऊ विश्वविद्यालय के अपने साथियों के जरिए खड़ा किया। आज एक–दूसरे के जानी दुश्मन अभय सिंह और धनंजय सिंह की कहानी किसी एक्शन फिल्म के प्लॉट सरीखी है। एक दौर था जब लखनऊ विश्वविद्यालय में अभय और धनंजय की दोस्ती की कसमें खायी जाती थीं। छात्र राजनीति को लेकर इनकी दुश्मनी अजय कुमार सिंह से हुई और ये दुश्मनी इतनी गहराई कि दोनों तरफ से परिसर से लेकर पूरी राजधानी में हत्याओं का दौर शुरू हुआ। कई मांओं ने अपने बेटे खोये तो कॅरियर की खातिर लखनऊ विश्वविद्यालय में पढ़ने आये कई छात्र अपराधी बन गये। अन्ततः अजय कुमार सिंह की हत्या हो गयी। धीरे–धीरे गहरे दोस्त अभय और धनंजय में दूरियां बढ़ीं, मनमुटाव हुआ, संबंध खत्म हुए हैं और फिर दोनों के बीच दुश्मनी का दौर शुरू हुआ। कहते हैं कि दोनों के पास ऐसे छात्रों की जमात थी, जो उनके लिए जान दे या ले सकते थे। अचानक दोनों के बीच दम और दाम के साम्राज्य पर कब्जा करने की होड़ शुरू हुई। यही से दोनो ने खुद को एक–दूसरे से ज्यादा ताकतवर दिखाने की कोशिश शुरू कर दी।

लखनऊ से दोनों के बीच शुरू हुआ मुकाबला, उनके अपने–अपने इलाकों तक फैला। राजनीतिक महत्वकांक्षाओं के चलते दोनों ने अपने–अपने क्षेत्रों में लोकप्रिय होने के सारे हथकण्डे अपनाये। विधानसभा चुनावों के महासमर में भी कूदे। अभय सिंह ने बहुजन समाज पार्टी के टिकट पर फैजाबाद से विधानसभा के लिए दांव लगाया, तो धनंजय सिंह ने लोकजनशक्ति पार्टी के टिकट पर जौनपुर के रारी इलाके से चुनाव लड़ा। इसमें धनंजय सिंह तो विधानसभा के लिए चुन लिये गये, लेकिन अभय सिंह को हार का मुंह देखना पड़ा। पर, दोनों के बीच कटुता और वैमनस्य कम नहीं हुई।

बताया जाता है 4 सितम्बर 2002 को वाराणसी के नदेसर इलाके में अभय सिंह गुट ने धनंजय सिंह की कार पर हमला किया, लेकिन उस हमले में धनंजय सिंह बच गये और अदावत परवान चढ़ी। दोनों पूर्वांचल से लेकर लखनऊ तक एक–दूसरे को ताकत दिखाते रहे। कभी एक पलड़ा भारी रहा तो कभी दूसरे का। विधायक बनने के बाद धनंजय सिंह की हैसियत बड़ी हो गयी। राजा भैया का संरक्षण मिलने से कद और बढ़ा तो राजा भैया का साथ देने पर मायावती की नजरें टेढ़ी हुईं। मायावती राज़ में उन्हें जेल में समय गुजारना पड़ा। उनके शगिर्दों की मिट्टी पलीद करने में भी मायावती ने कोई कसर नहीं छोड़ी। उधर, मुख्तार अंसारी का दामन थाम कर अभय सिंह ने अपनी ताकत बढ़ायी। अभय और धनंजय के गुट जौनपुर के टी.डी. कालेज छात्रसंघ चुनाव में भिड़े। 2005 के

साल में गांधी जयंती के दिन हुए इस झगड़े के दौरान पुलिस पहुंच गयी और धनंजय सिंह का करीबी राजेश सिंह उर्फ पप्पू मारा गया। इस मुठभेड़ में दो और मारे गये। साथ ही अभय–धनंजय की दुश्मनी और गहरायी। एक बात बात साफ है कि अभय सिंह और धनंजय सिंह दोनों ऊंचा मुकाम हासिल करना चाहते थे। लगता यह है कि बाहुबली अपनी ताकत के बल पर कानूनी–गैरकानूनी हर तरह के हथकण्डे अपना कर पहले तो माल कमाते हैं, फिर उसके बाद अपनी ताकत को और मजबूत करने के लिए राजनीति के अखाड़े में कूद जाते हैं। कभी हारते हैं तो कभी जीतते हैं। लेकिन एक बार विधायक या सांसद बनने के बाद पुलिस की दहशत कम हो जाती है। अगर सत्ताधारी दल के विधायक बने तो अपनी इच्छा के अनुसार पुलिस के दरोगाओं और अफसरों की ट्रांस्फर–पोस्टिंग करना कोई कठिन काम नही है।

यह समझना मुश्किल नही है कि कानून भंग करनेवाले कानून निर्माताओं का चोला क्यों धारण करना चाहते हैं और यह भी कि राजनीतिक दलों को ऐसे लोगों को गले लगाने से परहेज क्यों नही है। प्रदेश में राजनीति का इतिहास देखें तो जैसे–जैसे राजनीति में नैतिकता का पतन होता गया, वैसे–वैसे अपराधियों से नेताओं की सांठ–गांठ भी बढ़ती गयी। नेतागीरी की अंधी दौड़ में खद्दरधारियों ने अपराधियों से चुनाव में मदद लेनी शुरू कर दी। मदद में केवल उनके बाहुबल का इस्तेमाल ही नही था, बल्कि अपराधियों से धन भी लिया जाने लगा। अपराधियों की मदद के बदले सत्ता में आने पर उनके अहसान उतारे जाने लगे। पुलिस पर दबाव डालकर उनके गुनाहों को दबाया जाने लगा, खत्म किया जाने लगा। उनको लाइसेंस, ठेके दिलवाने में मदद होने लगी।

धीरे–धीरे अपराधियों को भी लगा कि जब वे चुनाव जिता सकते हैं तो खुद क्यों नहीं जीत सकते। बस फिर क्या अपराधी भी चुनाव में कूदने लगे और विधानसभा–संसद पहुंचने लगे। बहुत से बाहुबली ऐसे भी हैं जिनको किसी राजनीतिक दल के टिकट की जरूरत ही नहीं है। उनकी निर्दलीय प्रत्याशी के रूप में जीत इसका प्रमाण है। वैसे अपराधियों को टिकट देने में राजनीतिक दलों को शर्म नहीं आती है। राजनीति को अपराधीकरण से दूर करने की चाहे जितनी बात की जाये लेकिन सच्चाई यह है कि

वजह चाहे जो भी हो, आपराधिक प्रवृति के लोग पूर्वांचल में चुनाव लड़ रहे हैं, वोट पा रहे हैं और जीत भी रहे हैं। धन, धमक और धौंस का रौबदाब इस इलाके की पहचान बना हुआ है।

जिताऊ बाहुबलियों को खुशी–खुशी टिकट बांटा जाता है। माफिया सरगना अपने चुनाव क्षेत्र में बेतहाशा पैसा झोंककर प्रचार के लिए जोरदार भीड़ इकठ्ठा कर लेता है। प्रतिद्वंद्वी उम्मीदवार के अलावा मतदाताओं तक को डराने–धमकाने का बंदोबस्त कर लेता है। यहां विचारधारा, मूल्यों और सिद्धांतों को लेकर होनेवाले चुनाव प्रचार बीते जमाने की बात हो चुके हैं। आपराधिक रिकार्डवाले विधायकों की संख्या लगातार बढ़ती जा रही है।

कोई ऐसा राजनीतिक दल नही है जो आपराधिक रिकार्डवाले लोगों को टिकट न देता हो, लेकिन जानबूझकर की गयी इस गलती को कोई स्वीकारता नहीं। सभी दल यही दावा करते हैं कि दूसरी पार्टियां अपराधियों को टिकट देती हैं। उनके खुद के दल में जो बाहुबली हैं, उन पर जवाब होता है कि– अपराध साबित नहीं हुआ हैं, राजनीतिक मुकदमा था, वगैरह–वगैरह। यही नही अपराधीकरण का ठीकरा अक्सर मतदाताओं के सिर पर फोड़ दिया जाता है कि वो ही इन्हें जिताते हैं। साल दर साल बीतने के साथ लोगों का भरोसा उठता जा रहा है और उम्मीद खत्म होती जा रही है। अब यह लगने लगा है कि इस समस्या को लेकर राजनीतिक नेतृत्व गंभीर नही है। न ही राजनीति में अपराधियों की बढ़ती घुसपैठ को रोकने के लिए कोई कड़ा कदम उठाया जा रहा है। राजनेताओं की चाकरी करनेवाली पुलिस और अफसरों से उम्मीद रखना बेमानी है। गन और धन की राजनीति में निरीह जनता अपराधियों को चुनाव जीतने से रोक नही सकती। ऐसे तो बाहुबलियों के बढ़ते साम्राज्य को किसी तरह से रोक पाना संभव नहीं होगा। यह नज़र आ रहा है कि राजनीति में दाग़ियों का दखल और बढ़ेगा। फिर जब विधानसभा में दागी विधायकों का बहुमत हो गया हो तो उनको राजनीति से बाहर करना आसान भी नहीं है। हताशा बढ़ना स्वाभाविक है।

सबसे बड़ी समस्या पूर्वी उत्तर प्रदेश की है, जहां माफियाओं ने राजनीति में अपनी तगड़ी पैठ बना ली है। दुखद पहलू यह है कि वो अपने चुनाव क्षेत्र में लोकप्रिय भी हैं। उनके समर्थक मतदाताओं की संख्या खासी है। जो समर्थन नहीं देते, वो डर के मारे माफियाओं का विरोध भी नहीं करते। पूर्वांचल की सामंतशाही सोच के चलते माफियाओं के राजनीति में हैसियत बनाने के 'ट्रेंड' को एकतरह से मतदाताओं ने चाहे–अनचाहे अपनी स्वीकृति दे दी है। कारोबार, राजनीति और सामाजिक रसूख़ के त्रिकोण पर राज करने की माफियाओं की रणनीति सफल हो रही है। वे तीनों हैसियत हासिल करने के बाद असली राजा बन गये हैं। इनके पास हर बीमारी का इलाज बंदूक की गोलियां है। बात–बात पर खून बहाना इनकी आदत है। सबूत के अभाव में न्यायपालिका भी इनके खिलाफ बहुत कुछ नहीं कर पा रही है।

स्थिति भयावह है, इसका अंजाम और भी भयावह हो सकता है। लेकिन ऐसा भी नहीं

है कि इसको रोकना पूरी तरह से असंभव हो। जब देश से अंग्रेजों को भगाया जा सकता है तो राजनीति से अपराधियों को भी दूर किया जा सकता है। इसके लिए जरूरत है राजनीतिक इच्छाशक्ति की और उससे भी ज़्यादा जरूरी है कि मतदाता इस प्रवृत्ति पर अपने समर्थन की मुहर न लगाये। मतदाताओं को अपने छोटे–छोटे स्वार्थ को छोड़कर देशहित और प्रदेशहित के बारे में सोचने की जरूरत है। अगर लोग गुण्डों और अपराधियों को हरा नहीं सकते तो कम से कम ऐसे तत्वों को स्वेच्छा से वोट न दें। उन्हे वोट दें, जो भ्रष्टाचार और अपराध से दूर हैं। भले ही वो बिना किसी दल के समर्थन के निर्दलीय लड़ रहे हों या फिर राजनीति के नौसिखिये हों। यकीन मानिये कि एक–एक मतदाता की इस छोटी सी कोशिश का बड़ा परिणाम होगा। लोग अगर यह सोचते हैं कि राजनीतिक दलों से उम्मीद रखना बेमानी है तो फिर ईमानदारी और देशहित की गंगा नीचे से ऊपर बहानी होगी। ईमानदारों को जिताना होगा। आज से ही यह निर्णय कर लीजिये, ठान लीजिये कि अगले किसी चुनाव में कोई अपराधी जीतेगा तो कम से कम आप यह संतोष करेंगे कि उसे आपने वोट नहीं दिया था। आपने एक अच्छे प्रत्याशी को वोट दिया था, भले ही वह हार गया। याद रखिये ये कोशिश हमको और आपको करनी है। ...सिर्फ हमको और आपको।